॥ श्रीस्वामिनारायणो विजयते ॥

सत्संग शिक्षणश्रेणी की पाठ्यपुस्तक : 3

योगीजी महाराज

लेखक

प्रो. रमेश एम. दवे

प्रकाशक

स्वामिनारायण अक्षरपीठ

शाहीबाग, अहमदाबाद - 380 004.

YOGIJI MAHARAJ (Hindi Edition)
(Life-sketch of Yogiji Maharaj)

By Ramesh M. Dave

A textbook for examination prescribed under the curriculum set by B.A.P.S. Swaminarayan Sanstha.

Inspired by: HH Pramukh Swami Maharaj

Presented by: B.A.P.S. SWAMINARAYAN SANSTHA
'Swaminarayan Akshardham', N.H. 24, Akshardham Setu, Yamuna Kinara, New Delhi - 110 092. India.

Publishers: SWAMINARAYAN AKSHARPITH
Shahibaug, Amdavad - 380 004. India.

3rd Edition: January 2014. Copies: 3,000 (Total Copies: 9,000)

Warning: **Copyright:** © SWAMINARAYAN AKSHARPITH

All rights reserved. No part of this book may be used or reproduced in any form or by any means without permission in writing from the publisher, except for brief quotations embodied in reviews and articles.

ISBN: 978-81-7526-701-5

रजूकर्ता : बी.ए.पी.एस. स्वामिनारायण संस्था
'स्वामिनारायण अक्षरधाम', नेशनल हाईवे, 24, अक्षरधाम सेतु, यमुना किनारा, नई दिल्ली – 110 092.

प्रेरणामूर्ति : ब्रह्मस्वरूप प्रमुखस्वामी महाराज

सूचना : सर्वाधिकार सुरक्षित © स्वामिनारायण अक्षरपीठ
इस पुस्तक के अंश किसी भी स्वरूप में प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की लिखित सम्मति अनिवार्य है।

तृतीय संस्करण : जनवरी 2014

प्रति : 3,000 (कुल प्रति : 9,000)

मूल्य : ₹. **15.00** (स्वामिनारायण अक्षरपीठ के आर्थिक अनुदान से ₹. **25.00** में से रियायती मूल्य)

मुद्रक एवं प्रकाशक :
स्वामिनारायण अक्षरपीठ
शाहीबाग, अहमदाबाद–380 004.

॥ श्रीस्वामिनारायणो विजयते ॥

हम तो हैं स्वामी के बालक, मरेंगे स्वामी के लिए ।
हम तो हैं श्रीजी के युवक, लड़ेंगे श्रीजी के लिए ।।

नही डरते नहीं करते, हमारी जान की परवाह ।
हमें है भय नहीं किससे, न हमको मौत की परवाह ।।

किया शुभ यज्ञ का आरंभ, हम बलिदान कर देंगे ।
हमारे अक्षरपुरुषोत्तम, गुणातीत गान गाएँगे ।।

हम तो हैं श्रीजी की संतान, स्थान है अक्षर में हमका ।
लगाई धर्मनिष्ठा की भभूत तो भय हमें किसका? ।।

मिले हैं 'मोती' के स्वामी, उन्होंने बाँह ली थामी ।
प्रकट पुरुषोत्तम धामी, अक्षर ब्रह्म गुणातीत स्वामी ।।

कृपाकथन

ब्रह्मस्वरूप स्वामीश्री योगीजी महाराज द्वारा स्थापित व पोषित युवक प्रवृत्ति तीव्र गति से विस्तृत होती जा रही है। इस प्रवृत्ति से जुड़े युवाओं की आकांक्षा तथा ज्ञानपिपासा को संतुष्ट करने तथा उन्हें भगवान स्वामिनारायण प्रबोधित अक्षरपुरुषोत्तम के सिद्धांत की ओर अभिमुख करने के उद्देश्य से बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण संस्था ने क्रमबद्ध पुस्तकों के प्रकाशन का आयोजन किया है।

इन पुस्तकों द्वारा बालकों और युवाओं को व्यवस्थित, सुगम तथा सरल ढंग से सत्संग का शुद्ध ज्ञान प्राप्त होगा। भगवान स्वामिनारायण द्वारा उद्‌बोधित आदर्शों के पालन व प्रचार के लिए ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज द्वारा स्थापित यह संस्था, इस प्रकार की अनेक सत्संग प्रवृत्तियों में संलग्न है कि जिससे विश्व में हमारी महान हिन्दू संस्कृति का प्रचार व प्रसार हो।

भगवान स्वामिनारायण का दिव्य संदेश विश्व के कोने-कोने में प्रसारित हो तथा सभी मुमुक्षुओं को शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति हो इस हेतु इन पुस्तकों का भिन्न-भिन्न भाषाओं में प्रकाशन किया गया है।

इन पुस्तिकाओं के आधार पर सत्संग शिक्षण परीक्षाएँ आयोजित की जाएँगी साथ ही बालकों-युवकों को प्रमाणपत्र देकर प्रोत्साहित किया जाएगा। इस पुसत्कों को तैयार करने में ईश्वरचरण स्वामी, रमेशभाई दवे, किशोरभाई दवे तथा अन्य सहयोगियों ने भारी परिश्रम उठाया है, उनको हमारे आशीर्वाद हैं।

शास्त्री नारायणस्वरूपदासजी (प्रमुखस्वामी महाराज) के

अत्यंत स्नेहपूर्वक

जय श्री स्वामिनारायण।

क्रमिका

1. झीणाभाई का जन्म.....7
2. ध्यानमग्न झीणाभाई.....8
3. निडर सत्यवक्ता.....9
4. आदर्श विद्यार्थी 10
5. समय का सदुपयोग.....13
6. ठाकुरजी की सेवा 13
7. मुझे साधु बनाइये.....15
8. झीणा भगत जूनागढ़ में 16
9. जागा भक्त के दर्शन 18
10. प्रथम मिलन.....19
11. मैं तो सेवक हूँ 21
12. तपस्वी झीणा भगत 22
13. कृष्णजी अदा के आशीर्वाद ...25
14. नि:स्पृह संत 26
15. मान-अपमान में समता.....28
16. सेवामय संत.....29
17. सच्चा साधु.....31
18. मंदिर की सेवा में 33
19. श्रीजी-स्वामी वश में हैं 34
20. परभक्ति.....36
21. सर्प-दंश 37
22. अक्षर मंदिर के महन्त 39
23. गुरुभक्ति 40
24. शास्त्रीजी महाराज प्रकट हैं 41
25. युवक मण्डल और सत्संग सभा 42
26. युवकों के योगीराज.....44
27. युवकों को दीक्षा.....46
28. योगीजी महाराज का कार्य.....47
29. अंध महाद्वीप को उजाला दिया 52
30. स्वागत और बिदाई 53
31. योगीजी महाराज को क्या पसंद है ?.....55
32. योगीजी महाराज का उपदेश.....57
33. पूज्य प्रमुखस्वामी महाराज.....59

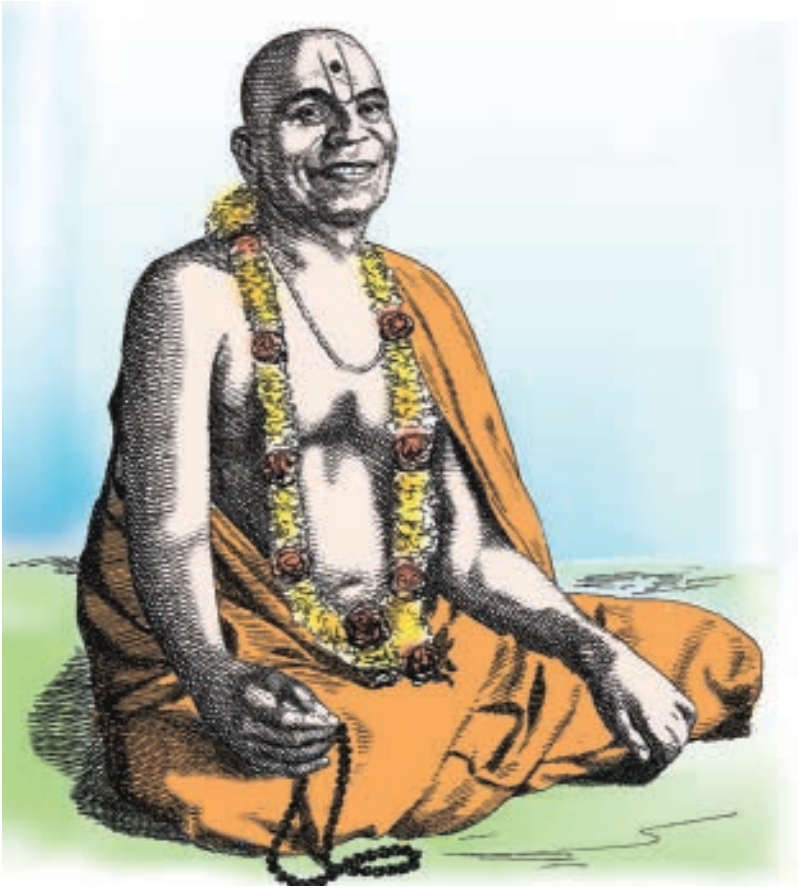

ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज (सन् 1892-1971)

1. झीणाभाई का जन्म

गुजरात राज्य के 'अमरेली' जिले में 'धारी' नाम का एक गाँव है। वहाँ देवचंदभाई वसाणी नाम के एक लोहाणा हरिभक्त रहते थे। देवचंदभाई के पितामह (दादा) श्रीजीमहाराज के कृपापात्र भक्त थे।

संवत् 1948 (सन् 1892) के वैशाख कृष्ण द्वादशी के दिन धारी में योगीजी महाराज का जन्म हुआ था। उनकी माता का नाम पुरीबाई तथा पिता का नाम देवचंदभाई था। उनका बचपन का नाम झीणाभाई था। माता-पिता प्यार से उन्हें 'झीणा' कहकर पुकारते थे। झीणा सबको प्यारा था। उसका सुन्दर, तेजस्वी चेहरा इतना आकर्षक था कि सभी को अच्छा लगता था।

झीणा जब बहुत छोटे थे, तभी से उनकी माता उन्हें लेकर खेत मजदूरी करने जाती थीं। पुरीबाई के साथ गाँव की अन्य स्त्रियाँ भी अपने-अपने बच्चों के साथ खेत में कपास चुनने जाती थीं। वे अपने-अपने बच्चों को किसी पेड़ की छाया में सुलाकर अपने-अपने काम में लग जाती थीं। प्राय: सभी बच्चे अपनी माँ को न देखकर ज़ोरों से रोते-चिल्लाते थे। यह देखकर खेत का मालिक उन स्त्रियों पर काफ़ी गुस्सा करता था, कभी

गालियाँ देता था, उन्हें डाँटता भी था और कहता था कि 'ऐसे रोनेवाले बच्चों को लेकर तुम काम पर क्यों आती हो?' आश्चर्य की बात यह थी कि पुरीबाई को ऐसी डाँट कभी सुननी न पड़ी, क्योंकि 'झीणा' कभी नहीं रोता था। उसे देखकर खेत का मालिक बोल उठता कि 'पुरीबाई! तुम्हारा यह झीणा बहुत चमत्कारिक है। श्रीकृष्ण की तरह यह हमेशा दाएँ पैर का अंगूठा चूसता रहता है। पुरीबाई! तुम्हारे इस लड़के के बड़े हो जाने पर, उसके चरणों में सभी लोग अपना सिर झुका देंगे और उसकी पूजा करेंगे।'

कुछ समय पश्चात् झीणा जब थोड़ा बड़ा हो गया तो लोग उसे 'झीणाभाई' कहने लगे। झीणाभाई को बचपन से ही सादगी और सफ़ाई पसंद थी। भक्ति और भजन के अलावा उसका मन अन्य वस्तुओं में नहीं लगता था।

2. ध्यानमग्न झीणाभाई

धारी गाँव की सीमा पर तीन नदियाँ एक साथ मिलती हैं, उसे शेत्रुंजी नदी का त्रिवेणी संगम कहते हैं। तीनों नदियाँ एक होकर एक साथ बहती हैं। उस पर एक पुल है, पुल के पास पहुँचते ही नदी छोटे-से झरने-सी हो जाती है। धारी गाँव के लोग इसलिए उसे 'पातालिया ह्रद' कहते हैं।

उसी जगह बिल्कुल पुल के पास रोज सुबह झीणाभाई स्नान करने जाते थे। स्नान के बाद शुद्ध स्वच्छ वस्त्र पहनकर वे पालथी लगाकर ध्यान करने बैठ जाते। लम्बे अर्से तक वे ध्यान में मग्न रहते। ध्यान में वे भगवान स्वामिनारायण की मूर्ति को देखते, उन्हीं का स्मरण करते। ऋषियों के तपोवन के समान इस एकान्त स्थान में बैठे झीणा भगत को जो कोई भी देखता, उसे अवश्य ऐसा लगता था कि मानो ध्यान में बैठे हुए ध्रुवजी तपश्चर्या कर रहे हैं! छोटे से झीणाभाई को ध्यानस्थ देखकर सब आश्चर्यचकित हो जाते थे।

जब कभी उनके बालमित्र वहाँ स्नान के लिए आते थे, तो झीणा को ध्यानमग्न देखकर आश्चर्यचकित हो जाते थे। बड़ी देर तक उनके बालमित्र प्रतीक्षा में वहाँ खड़े रह जाते थे। झीणाभाई जब ध्यान से जागते, आँखें खोलते उनसे पूछते कि वे ध्यान लगाकर यहाँ क्या कर रहे हैं? पूछने पर

वे उत्तर देते कि 'मैं भगवान का ध्यान कर रहा हूँ, आप लोग भी मेरे साथ ध्यान में बैठिए। मैं आप लोगों को ध्यान करना सिखला दूँगा।'

बचपन से ही वे प्रात:काल में ध्यान में बैठ जाते थे और दूसरों को ध्यान करना सिखलाते थे। वास्तव में सबको यह करना चाहिए कि सुबह में भगवान स्वामिनारायण का स्मरण करके, उनका ध्यान करके फिर ही दूसरा कामकाज करें।

3. निडर सत्यवक्ता

झीणाभाई पाँचवीं कक्षा में पढ़ते थे। पाठशाला के प्रधान अध्यापक का नाम था त्रिभुवनदास। वे बहुत क्रोधी स्वभाव के थे। उन्होंने एक दिन चन्दू नामक विद्यार्थी को बिना अपराध के दण्ड दे दिया। उन्होंने उसे खूब पीटा और हाथ पकड़कर नीचे पटक दिया। झीणाभाई से यह अच्याचार नहीं सहा गया। उनको चन्दू पर दया आई। वे 'स्वामिनारायण, स्वामिनारायण' रटने लगे। सब विद्यार्थी डर के मारे तितर-बितर हो गए। सख्त पिटाई के कारण चन्दू मर गया। चन्दू के पिताजी ने उच्च अधिकारी को पत्र लिखकर जाँच करने की प्रार्थना की। उच्च अधिकारी पाठशाला में आए और जाँच शुरू हुई। अपराधी - प्रधानाध्यापक का नाम देने की किसी में हिम्मत नहीं

थी। उच्च अधिकारी ने कक्षा के सभी विद्यार्थियों से पूछा, परन्तु सब चुप थे। झीणाभाई चुप रहनेवाले व्यक्ति नहीं थे, वे सत्यवादी थे। सच बोलने में डर किस बात का? झीणा ने निडर होकर अधिकारी से कहा, 'हमारे प्रधानाध्यापक ने बेगुनाह चन्दू को बहुत मारा है और हाथ पकड़कर उसे नीचे पटका है।' इसके पश्चात् सभी छात्रों में हिम्मत आ गई। सब एक साथ बोल उठे कि 'साहब! प्रधानाध्यापक ने चन्दू को पीटा है।' उच्च वर्ग के अधिकारी ने देखा कि झीणाभाई के ललाट पर तिलक है, चेहरे पर निर्दोषता और सच्चाई झलक रही है। उनको झीणाभाई की बात सच लगी। उन्होंने तुरन्त प्रधानाध्यापक को बर्खास्त कर दिया और झीणाभाई को सत्य बोलने के लिए पुरस्कार दिया।

'सत्यमेव जयते' सत्य की ही जय होती है। हमें भी सत्य बोलने में किसी से नहीं डरना चाहिए। बचपन से ही सच बोलने की आदत डालनी चाहिए।

4. आदर्श विद्यार्थी

झीणाभाई पढ़ाई में बहुत होशियार थे। प्रत्येक कक्षा में वे अव्वल रहते थे। पुरस्कार भी बहुत पाते थे। कुछ बुद्धू किस्म के विद्यार्थी उनके अगल-बगल में बैठते थे, ताकि उनकी स्लेट से कुछ देखकर लिखने को

मिले। उन्हीं में से कुछ विद्यार्थी झीणाभाई को आँखें दिखाकर कहते के कि 'तुम जवाब लिख लो तब हमको बता देना।' झीणाभाई हँसकर कहते कि 'हाँ भाई हाँ, मैं अपनी स्लेट जरा सी टेढ़ी रखूँगा, तुम लोग जवाब देख लेना।'

शिक्षक जब गणित सिखाते तो झीणाभाई तुरन्त हिसाब करके जवाब लिखकर स्लेट उल्टी रख लेते थे। बगल में बैठे हुए बुद्धिहीन विद्यार्थी धीरे से झीणाभाई से जवाब पूछते, लेकिन झीणाभाई चुप रहते, कुछ भी नहीं कहते। कभी कोई विद्यार्थी उन्हें डाँटता भी कि 'यदि जवाब नहीं बताओगे तो पीटेंगे।' झीणाभाई निडरता से कहते कि 'तुम हिसाब लगाओ, यदि मेरा हिसाब-जवाब गलत होगा तो तुम्हारा भी गलत हो जाएगा।'

यदि कुछ विद्यार्थी उनकी स्लेट पर से जवाब देख लेते, चोरी से लिख लेते तो वे कहते कि 'यह अच्छा नहीं है, दूसरे की स्लेट से चोरी करके लिख लेना उचित नहीं है। चोरी करना, भगवान को ठगना है।'

इस प्रकार झीणाभाई सबको पढ़-लिखकर होशियार बनने का उपदेश देते थे।

चोरी करना महापाप है।

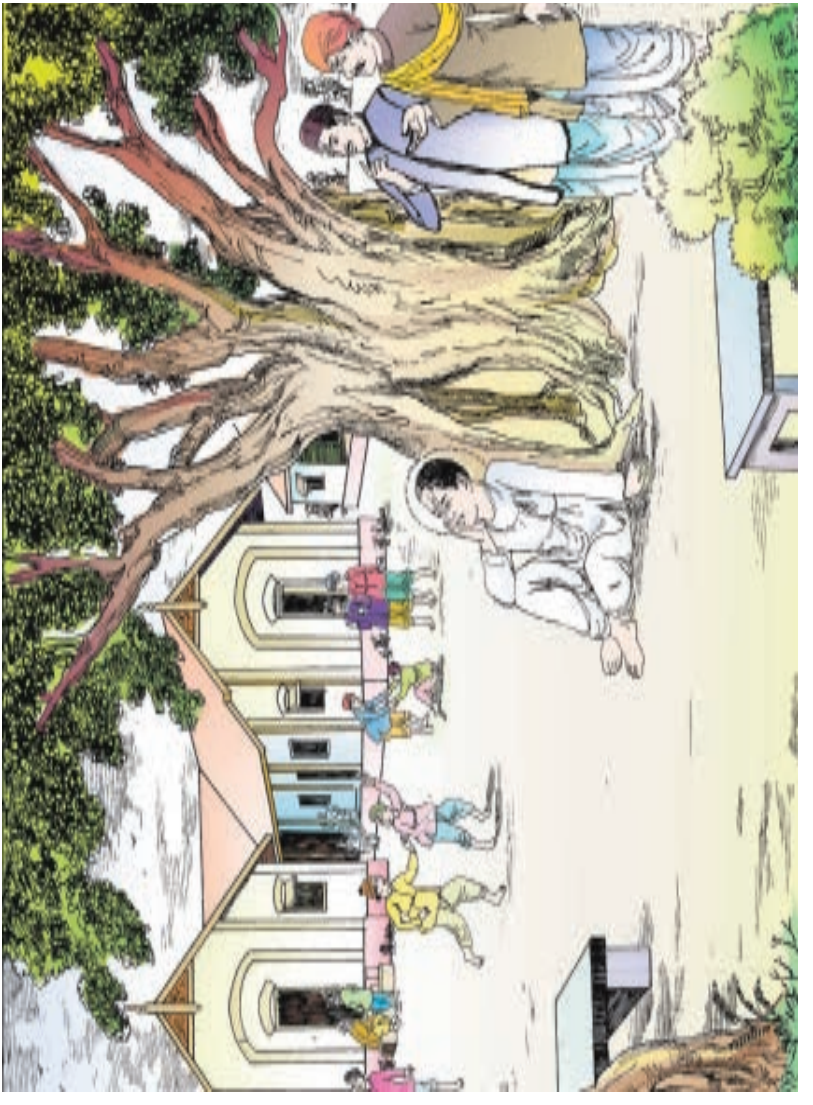

5. समय का सदुपयोग

दोपहर को दो बजे पाठशाला में आधे घण्टे की छुट्टी मिलती थी। इस समय विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के खेल खेलते थे। झीणाभाई को खेलों में बिल्कुल रुचि नहीं थी। उनको तो बचपन से ही भगवान के भजन में रुचि थी, इसलिए सब लड़के जब खेल खेलते होते, तब वे अकेले किसी फोन में, किसी पेड़ के नीचे बैठकर भगवान का भजन करते।

अन्य विद्यार्थियों तथा शिक्षकों के मन में सवाल उठता कि 'झीणा क्या कर रहा होगा?' एक दिन दो शिक्षकों ने झीणाभाई को पेड़ के नीचे बैठा देखकर पूछा, 'झीणा! तू खेलता नहीं है? सारे दिन केवल भगवान को ही याद किया करता है, वैरागी बन बैठा है, तो फिर साधु क्यों नहीं हो जाता?'

'जी हाँ, साधु हो जाऊँगा।' इतना कहकर वह पुनः भगवान का भजन करने लग गए। उनके बालमित्रों को क्या पता था कि ये आगे चलकर सचमुच साधु हो जाएँगे; इतना ही नहीं बल्कि दुनियाभर में नाम कमाएँगे।

झीणाभाई को जब कभी फ़ुर्सत का समय मिलता, तो वे उसे व्यर्थ न गँवाकर भगवान का भजन किया करते थे।

तो हम भी समय का दुरुपयोग क्यों करें? भगवान के भजन में समय बिताना ही समय का सदुपयोग है।

6. ठाकुरजी की सेवा

धारी गाँव के मंदिर में झीणाभाई के चाचा मोहनभाई सेवा करते थे। वे अब वृद्ध हो गए थे। बार-बार बीमार भी हो जाते थे। बीमारी के दिनों में ठाकुरजी की सेवा अच्छी तरह से नहीं हो सकती थी। वे हमेशा इसी विचार में रहते थे कि सेवा करने के लिए कोई भला-सा भक्त मिल जाए तो कितना अच्छा? सोचते-सोचते उनकी नज़र झीणाभाई पर पड़ी। उन्होंने जब उनसे इस विषय में पूछा तो झीणाभाई तो बहुत खुश हो गए, ठाकुरजी की सेवा करने का अवसर जो मिला! उन्होंने भावपूर्वक कहा, 'मोहनकाका! ठाकुरजी की सेवा की चिन्ता आप बिल्कुल न करें, वह काम अब मैं करूँगा।'

बस, उसी दिन से उन्होंने ठाकुरजी की सेवा का काम शूरू कर दिया।

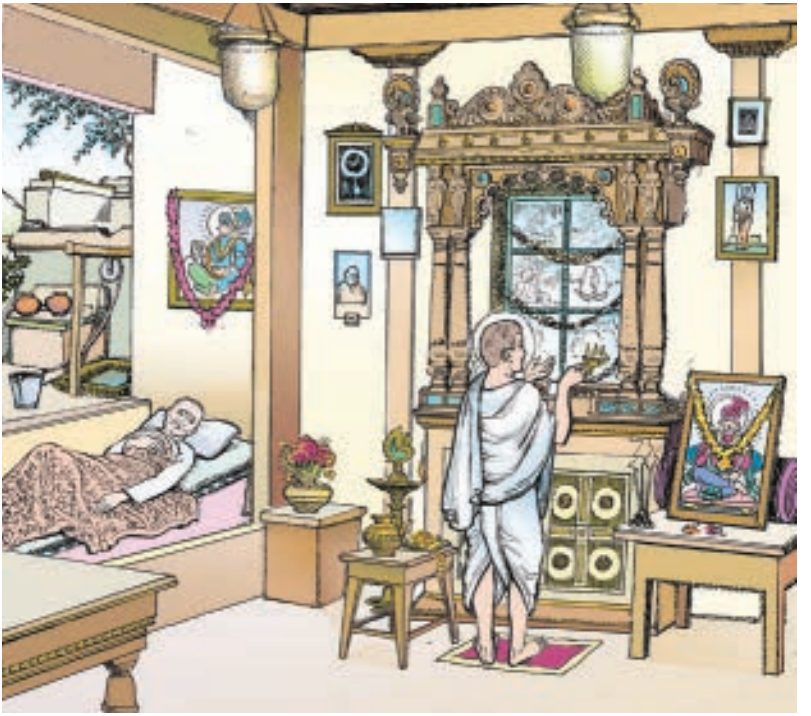

वे ठाकुरजी को स्नान कराते, चन्दन-कुंकुम का तिलक करते, धूप-दीप करते, भोग लगाते, श्रद्धापूर्वक आरती करते। इस तरह विधिपूर्वक हर प्रकार की ठाकुरजी की सेवा करने लगे। उन्होंने कुएँ से पानी निकालकर मंदिर के आँगन में फूल और पौधे उगाये, फूलों की बेल दीवार पर चढ़ाई। कुछ दिनों में मंदिर की शान-सूरत ही बदल डाली। मंदिर फूलों की सुगंध से महक उठा। झीणाभाई प्रतिदिन प्रात:काल रंगबिरंगे फूलों की मालाएँ गूँथते और ठाकुरजी को प्यार से पहनाते। नये-नये खाद्य पदार्थ लेकर ठाकुरजी को भोग लगाते और थाल अर्थात् नैवेद्यगान भी गाते। मानो चलते-फिरते, बोलते - प्रत्यक्ष भगवान हों ऐसा समझकर एकचित्त होकर वे भगवान की पूजा करते थे, मूर्ति के साथ बातें करते थे।

सुबह-शाम बालमित्रों को मंदिर में ले जाकर वे धुन करवाते थे। स्वयं भजन-आरती गाकर उनसे गवाते और दण्डवत् प्रणाम करना सिखलाते थे। अंत में प्रसाद लेकर सबको बिदा करते थे।

7. मुझे साधु बनाइये

झीणाभाई अब सुबह-शाम मंदिर में ही रहने लगे थे। ठाकुरजी की सेवा तो करते ही थे, साथ-साथ वहाँ जो साधु-सन्त पधारते थे, उनकी सेवा भी वही करते थे। साधु-सन्त प्रसन्न होकर उन्हें आशीर्वाद देते थे।

झीणाभाई ने सातवीं कक्षा का अध्ययन पूरा किया ही था कि जूनागढ़ से पूज्य कृष्णचरणदास स्वामी, सन्त मण्डली के साथ धारी गाँव में पधारे। वे अपने मंडल के साथ मंदिर में ठहरे। झीणाभाई सन्तों को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। वे सवेरे से लेकर देर रात तक उनकी सेवा करते थे। सुबह तड़के उठकर जल्दी से स्नान-पूजा करके सन्तों की सेवा में लग जाते थे। कुएँ से पानी निकालकर सब सन्तों को नहलाते थे। मंदिर में झाड़ू लगाकर आसन बिछा देते थे। सारा काम प्रेम और भक्तिपूर्वक करते थे।

सद्‌गुरु कृष्णचरणदास स्वामी, अक्षरब्रह्म गुणातीतानंद स्वामी के कृपापात्र शिष्य थे। उन्होंने झीणाभाई की भक्ति तथा श्रद्धा देखी। थक जाने पर भी झीणाभाई सन्तों की सेवा करते रहते थे, यह देखकर वे बहुत खुश हो गए।

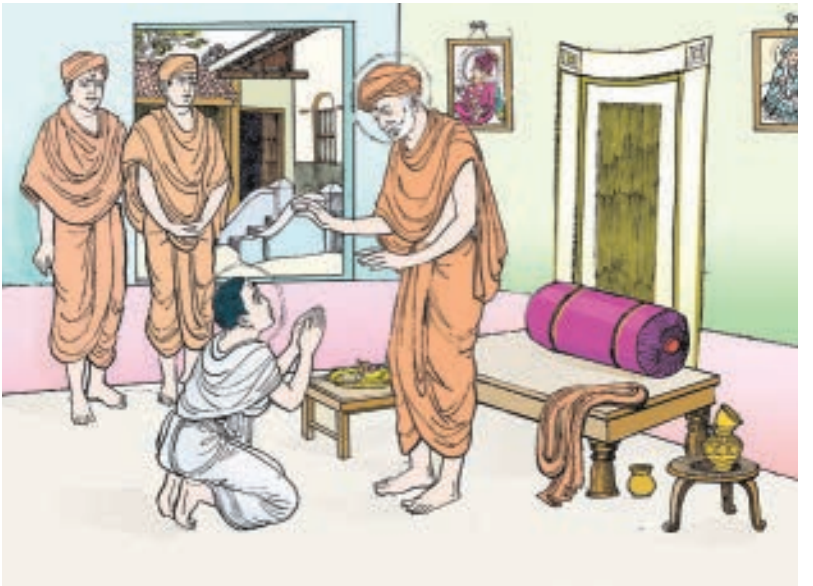

एक दिन सुबह उन्होंने झीणाभाई को प्रसाद दिया और पूछा, 'झीणा! साधु बनोगे?'

झीणाभाई के आनन्द की कोई सीमा न रही। सहजतापूर्वक उन्होंने उत्तर देते हुए कहा, 'हाँ, महाराज, आप मुझे साधु बनाएँ तो बड़ी कृपा होगी। मेरी भी यही इच्छा है। कई दिनों से आपके सामने अपनी यह इच्छा मैं व्यक्त करना चाहता था। आज आपने मेरे मन की ही बात कह दी, कृपया मुझे साधु बनाइये। साधु बनकर मैं आपकी और ठाकुरजी की सेवा करना चाहता हूँ।' सद्गुरु कृष्णचरणदासजी ने आशीर्वाद दिया कि 'तुम्हारी इच्छा अवश्य पूरी होगी।'

8. झीणा भगत जूनागढ़ में

उक्त घटना के एक साल बाद झीणाभाई को माता-पिता की अनुमति प्राप्त हुई। माता पुरीबाई ने झीणाभाई को अन्तिम बार कंसार बनाकर खिलाया। ललाट में तिलक किया और शुभाशिष देकर अपने पुत्र को बिदा दी। संवत् 1965 के कार्तिक शुक्ला सप्तमी के दिन (दि. 1-11-1908) झीणाभाई ने घर-संसार का त्याग कर दिया और बड़े भाई कमलशीभाई

के साथ वे जूनागढ़ पहुँचे। वहाँ दूसरे दिन वे सद्‌गुरु कृष्णचरण स्वामी से मिले।

संवत् 1965 के कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी के दिन (दि. 8-11-1908) सद्‌गुरु कृष्णचरण स्वामी ने उन्हें पार्षद-दीक्षा दी। अब वे झीणाभाई से झीणा भगत बन गये। वे मंदिर की प्रत्येक सेवा में दत्तचित्त रहते थे। उस जमाने में मंदिर की गायों-भैंसों को चराने का काम पार्षद ही किया करते थे। पार्षदों के साथ झीणा भगत भी गिरनार की तलहटी में गायों-भैंसों को चराने जाने लगे। गाय-भैंसें चरती हों, उस समय झीणा भगत भजन गाते, भगवान स्वामिनारायण की बातें कहते और दूसरों से सुनते भी थे। गायों को झीणाभाई के साथ इतना गहरा नाता हो गया कि उनके इशारे पर गायें तुरन्त दौड़कर उन्हें घेर लेती थीं।

शाम को गायों-भैसों का झुण्ड लेकर जब वे मंदिर लौटते तो रास्ते में करीब तीन सौ बबूल की छड़ियाँ दातून के लिए काट लेते थे, जो सबके काम आती थीं। इसके अलावा रोज़ सुबह वे झाड़ू लगाते, गोबर साफ़ करते और उपले भी बनाते थे।

वे चाहे कितना भी थके क्यों न हों, फिर भी रात की कथा में हाज़िर रहते थे। स्वयं धुन कराते और भजन गान किया करते। रात को देर तक

कथा में बैठने पर भी दूसरे दिन गुरु की सेवा के लिए प्रात: चार बजे उठ जाते थे। यह था, उनका नित्य कार्यक्रम।

इस प्रकार पूरे छ: महीने सेवा-शुश्रूषा करके उन्होंने सद्गुरु कृष्णचरणदास स्वामी की प्रसन्नता प्राप्त कर ली।

हमें भी उनकी तरह साधु-सन्तों की सेवा कर उन्हें प्रसन्न करना चाहिए।

9. जागा भक्त के दर्शन

उन दिनों मेवासा गाँव के कृष्णजी अदा और पूंजाजी बापू बार-बार जूनागढ़ आते रहते थे। झीणा भगत कथा सुनने के लिए उनके पास जाकर बैठते थे। कृष्णजी अदा गुणातीतानन्द स्वामी के कृपापात्र शिष्य जागा भक्त की महिमा सम्बंधी बहुत सी बातें करते थे। ऐसी बातें उन्होंने खूब सुनीं। फलस्वरूप उन्हें जागा भक्त के दर्शन की तीव्र इच्छा हुई।

इसी सोच-विचार में एकबार झीणा भगत रात में सो गए थे। करीब दो बजे वे मंदिर की जाली के पास सोये थे कि अचानक उन्हें एक सुन्दर

स्वप्न दिखाई दिया। सपने में उनको जागा भक्त के दर्शन हुए। गुरु जागा भक्त ने सफेद साफा बाँधा था, कच्छा मारकर धोती पहनी थी। सपने में ही झीणा भगत ने उन्हें दो दण्डवत् प्रणाम किए।

जागा भक्त ने कहा, 'बस कीजिए।'

झीणा भगत ने कहा, 'जागा स्वामी! आज आपने मेरे दिल की कामना पूरी की है, मुझे दर्शन दिए। आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ, कृपया कुछ उपदेश दीजिए।' जागा भक्त ने प्रत्युत्तर में कहा, 'दो बातें याद रखना : एक तो सत्शास्त्र के अध्ययन का व्यसन हमेशा रखना और दूसरी बात यह कि उत्तम साधु-सन्तों का संग करना।' इस बातचीत के बाद झीणा भगत ने स्वप्न में ही जागा भक्त को कई बार साष्टांग दण्डवत् प्रणाम किए।

सत्शास्त्र का अध्ययन का मतलब है कि वचनामृत, गुणातीतानन्द स्वामी का उपदेशामृत, शिक्षापत्री, भक्तचिन्तामणि, हरिलीलामृत आदि धर्मग्रन्थों का नियमित पठन-पाठन एवं मनन करना।

अच्छे साधु-सन्तों के संग का अर्थ है कि गुरु शास्त्रीजी महाराज जैसे सत्पुरुषों का अथवा उनके उपदेशों का अभ्यास-ग्रन्थों का सत्संग करना।

इन दोनों अच्छी आदतों के द्वारा हमें भी अपने गुरुजी के समान महान बनना चाहिए।

10. प्रथम मिलन

झीणा भगत स्वामी कृष्णचरणदास के सन्त मण्डल में थे। सद्गुरु कृष्णचरणदास स्वामी अपनी सन्त मण्डली के साथ जब राजकोट पधारे, तो साथ में झीणा भगत भी थे।

उसी दौरान एक दिन ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज राजकोट पधारे और कृष्णजी अदा के घर ठहरे। झीणा भगत को जब यह समाचार मिला तो उन्हें शास्त्रीजी महाराज के प्रत्यक्ष दर्शन की प्रबल इच्छा हुई। वे बड सबेरे, तीन बजे अन्य सन्तों के साथ आजी नदी पर स्नान करने को जाने के निमित्त कृष्णजी अदा के घर पर पहुँचे।

जादवजीभाई ने शास्त्रीजी महाराज से निवेदन किया कि 'कुछ सन्त आपके दर्शन के लिए पधारे हैं।' शास्त्रीजी महाराज स्वयं उठकर उस कमरे

शास्त्रीजी महाराज के साथ प्रथम मुलाकात

में गए, जहाँ साधु-सन्त बैठे हुए थे। झीणा भगत और साथी सन्तों ने उठकर उन्हें दण्डवत् प्रणाम किए और बाद में गुणातीतानन्द स्वामी की प्रासादिक माला एवं कमण्डल भेंट में दिया। शास्त्रीजी महाराज यह देखकर अत्यंत प्रसन्न हुए।

झीणा भगत लगातार शास्त्रीजी महाराज को ही देखते रहे। और शास्त्रीजी महाराज भी रह-रहकर अपनी कृपादृष्टि झीणा भगत पर डालते रहे। झीणा भगत ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि 'यदि गुरु करेंगे तो शास्त्रीजी महाराज को!' उसी समय उन्होंने शास्त्रीजी महाराज को अपना गुरु मान लिया।

इस प्रकार संवत् 1966 (दि. 12-8-1910) के श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन शास्त्रीजी महाराज और झीणा भगत का राजकोट में प्रथम मिलन हुआ। मानो गंगा और सागर का संगम हो गया!

11. मैं तो सेवक हूँ

कुछ समय के बाद सद्गुरु कृष्णचरणदास स्वामी अपनी मण्डली के साथ राजकोट छोड़कर देहातों में घूमने के लिए निकले। घूमते-फिरते वे सरधार के पास हजड़ियाला गाँव में पहुँचे। वहाँ स्वामिनारायण का मंदिर नहीं था, इसीलिए सब गाँव के चौरे-चौपाल पर ठहरे।

दोपहर का समय था। कथा की समाप्ति के बाद सभी सन्त आराम करने लगे। झीणा भगत भी सेवा से निवृत्त होकर अभी लेटे ही थे कि अचानक एक गरासिया (जागीरदार) हरिभक्त वहाँ आ पहुँचे। वे ज्योतिष के जानकार थे, इतना ही नहीं; सामुद्रिक शास्त्र के भी अच्छे विद्वान थे। उनकी दृष्टि झीणा भगत के पैर के तलवे पर पड़ी, तो वे आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने आज तक ऐसी चमत्कारिक चरण-रेखा कभी नहीं देखी थी।

झीणा भगत उन क्षत्रिय गृहस्थ के स्वागत हेतु उठ बैठे। क्षत्रिय भक्त ने कहा कि 'अहो झीणा भगत! आप तो महान सद्गुरु होंगे; लाखों मनुष्य आपकी कृपादृष्टि पाने के लिए आपके पीछे-पीछे घूमेंगे और आपकी सेवा का अवसर प्राप्त करने के लिए आपसे प्रार्थना करेंगे। भगवान

स्वामिनारायण एक क्षण के लिए भी कभी आपसे जुदा नहीं होंगे। आपके चरणों में जो ऊर्ध्वरेखा है, ऐसी रेखा मैंने कहीं नहीं देखी। ऐसी ऊर्ध्वरेखा वाले व्यक्ति बहुत कम होते हैं, ऐसे पुरुष वास्तव में अवतारी पुरुष का स्थान पाते हैं।'

इन शब्दों को सुनते ही झीणा भगत ने अपना पाँव ढंक लिया। उन्होंने कहा, 'ऐसा मत कहिए, मैं तो एक सामान्य सेवक हूँ। सद्‌गुरु तो हमारे कृष्णचरणदास स्वामी हैं। आईन्दा ऐसी बात आप कृपया किसी से न कहिएगा।' लेकिन उन राजपूत भक्त ने यह बात अन्त में कृष्णचरणदास स्वामी से कह ही डाली। यह सुनकर कृष्णचरणदास स्वामी बोल उठे, 'इनके लक्षण ऐसे ही हैं। यह महान भक्त होंगे, इसमें मुझे भी कोई शक नहीं है।'

12. तपस्वी झीणा भगत

'मेंगणी' गाँव के क्षत्रिय दरबार बहुत अच्छे भक्त थे। प्रतिवर्ष वे अपने गाँव में अन्नकूट का समारोह करते थे और उस अवसर पर सद्‌गुरु

कृष्णचरणदास स्वामी को अपने गाँव ले जाते थे।

एकबार लोधिका के क्षत्रिय दरबार ने अपने यहाँ होनेवाले अन्नकूट के महोत्सव पर उपस्थित रहने के लिए सद्‌गुरु कृष्णचरणदास स्वामी को प्रेमपूर्वक आमंत्रण दिया। लोधिका के दरबार बहुत श्रद्धालु भक्तराज थे। उन्होंने अन्नकूट महोत्सव के लिए बड़े पैमाने पर तैयारी की थी। सारे साधु-सन्त और सभी पार्षद सुबह से शाम तक अन्नकूट के समारोह के लिए मिठाइयाँ बनाने में लग गए थे।

अन्नकूट के दिन दरबार ने खाजा-जलेबी आदि स्वादिष्ट व्यंजन बनवाये थे। झीणा भगत तप और उपवास को ज्यादा पसंद करते थे। उन्हें जब इस बात का पता चला तो उन्होंने उस दिन निर्जल उपवास का व्रत रख लिया। भोजन के समय सब भोजन के लिए गए, केवल झीणा भगत नहीं गए।

दरबार साहब को जब यह मालूम पड़ा कि आज झीणा भगत का उपवास है तो वे, उनके पास आकर निवेदन करने लगे कि 'त्योहार है, आज उपवास नहीं करना चाहिए। भोजन ग्रहण कीजिए।' काफी आग्रह किया लेकिन वे टस से मस नहीं हुए। दरबार साहब के दिल में दुःख न

हो, ऐसी भावना से वे कहने लगे, 'मुझे पेट में कुछ दर्द है, भूख ही नहीं लगी; मुझे भोजन करने की तनिक भी इच्छा नहीं है।' – आदि बातें कहकर उनके आग्रह को टाल दिया, परन्तु भोजन नहीं किया। ठाकुर साहब, सद्‌गुरु कृष्णचरणदास स्वामी के पास जाकर बोले, 'स्वामी! झीणा भगत से कहिए कि वह भोजन कर लें।'

सद्‌गुरु कृष्णचरणदास स्वामी ने भी झीणा भगत को भोजन कर लेने के लिए काफी आग्रह किया, लेकिन वे अपने निश्चय पर अटल रहे। स्वादिष्ट मिठाई का आकर्षण भी उन्हें उपवास करने से न डिगा सका।

झीणा भगत के तप और त्याग की भावना से सद्‌गुरु कृष्णचरणदास स्वामी उन पर बहुत प्रसन्न हुए। रात को झीणा भगत को अपने पास बुलाकर उनके सिर पर वरद हस्त रखकर आशीर्वाद दिए और सभी छोटे-बड़े सन्तों को उनकी तरह तपस्वी और त्यागी बनने का उपदेश दिया।

13. कृष्णजी अदा के आशीर्वाद

संवत् 1967 चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन 11 अप्रैल, 1911 को सुबह आचार्यश्री श्रीपतिप्रसादजी महाराज ने वड़ताल में, झीणा भगत को बड़े धूमधाम से साधु-दीक्षा प्रदान करके, उनका नाम 'साधु ज्ञानजीवनदासजी' रखा। सद्‌गुरु कृष्णचरणदास स्वामी उन्हें 'ज्ञानजी स्वामी' कहकर पुकारते, जब कि जूनागढ़ के साधु-पार्षद उनको 'योगी' नाम से पुकारने लगे।

संवत् 1967 ज्येष्ठ शुक्त एकादशी के उत्सव के बाद योगीजी महाराज सात सन्तों को अपने साथ लेकर जूनागढ़ छोड़ दिये और शास्त्रीजी महाराज की सेवा में पहुँच गए। शास्त्रीजी महाराज के मार्गदर्शन में वे अक्षरपुरुषोत्तम की उपासना के प्रचार में लग गए।

संवत् 1969 आश्विन शुक्ला एकादशी के दिन शनिवार था। कृष्णजी अदा जीवन की आखरी घड़ियाँ गिन रहे थे। उन्होंने शास्त्रीजी महाराज और सभी सन्तों को आखिरी 'जय स्वामिनारायण' कहा और पूछा कि 'ज्ञानजी स्वामी कहाँ हैं? कृपया उन्हें मेरे पास बुलाइए।' ज्ञानजी स्वामी (योगीजी महाराज) कोने में से उठकर उनके पास पहुँचे और दण्डवत् प्रणाम करके

वहीं खड़े रहे।

कृष्णजी अदा ने संकेत से अपने समीप बुलाकर उनके सिर पर कुछ क्षण अपना वरद हस्त फेरा और आशीर्वाद दिए।

यह देखकर निर्गुणदास स्वामी बोल उठे, 'योगीजी महाराज! ये कृष्णजी अदा आपके सिर पर हाथ नहीं फेर रहे हैं, बल्कि यह समझिए कि श्रीजीमहाराज, गुणातीतानन्द स्वामी, भगतजी महाराज, जागा भक्त आदि सिद्ध सन्त आपके सिर पर हाथ फेर रहे हैं।'

इतने में कृष्णजी अदा की आँखें प्रेमाश्रु से डबडबा आईं, वे सबको 'जय स्वामिनारायण' कहते हुए कुछ ही क्षणों में अक्षरधामवासी हो गए।

14. निःस्पृह सन्त

योगीजी महाराज एक निःस्पृह सन्त थे। छोटी उम्र के साधु होने पर भी उनके मन में किसी प्रकार की इच्छा-वासना नहीं थी। सारा दिन वे कथा, कीर्तन, स्तोत्रपाठ और सेवा में तल्लीन रहते थे।

एकबार योगीजी महाराज भावनगर में बिराजमान थे। एक वरिष्ठ हरिभक्त के भवन में वे ठहरे थे, जो राजमार्ग पर स्थित था। शाम को वे ऊपर के कमरे में बैठकर 'स्वामी की बातें' पढ़कर भक्तों को सुना रहे थे।

उस दिन भावनगर के महाराजा के यहाँ विवाह-उत्सव था। सारे शहर में बड़ी धूमधाम थी, उसी समय राजमार्ग से विवाह का जुलूस निकला। रास्ते के दोनों ओर जुलूस को देखने के लिए भारी भीड़ जमा हो गई थी। खिड़कियों और छतों पर खड़े हो लोग झुक-झुककर जुलूस देख रहे थे। दूर तक शहनाई और नगाड़े की आवाज़ गूँज रही थी।

अचानक एक हरिभक्त दौड़ते हुए योगीजी महाराज के पास आ पहुँचे और बोले, 'स्वामीजी! चलिए, यहाँ क्यों बैठे हैं? महाराजा साहब के महल से बारात का जुलूस निकला है, देखने लायक है, खिड़की से जरा झाँककर तो देखिए।'

योगीजी महाराज ने सहजभाव से कहा कि 'अरे भाई! हम साधुओं को इससे क्या? हम लोग यह क्यों देखें? जिस चीज़ का हमने त्याग किया

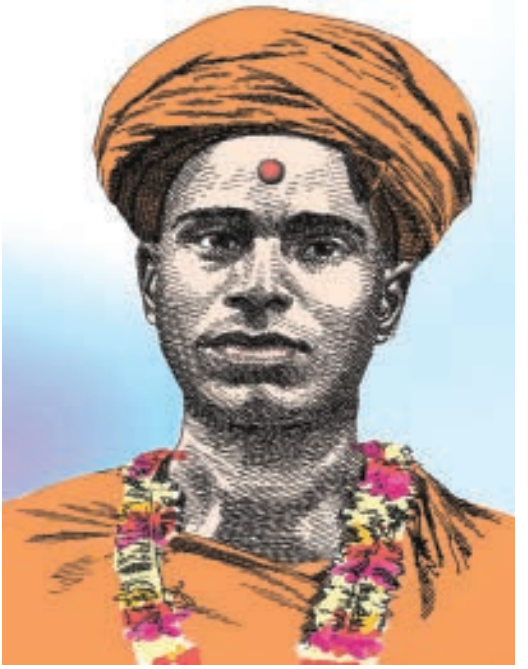

है, उस चीज़ को अपने हृदय में हम क्यों स्थान दें?' छोटे-से नये साधु का दृढ़ वैराग्य भावना देखकर सभी हरिभक्त आश्चर्यचकित रह गए और योगीजी महाराज के चरणों में गिर पड़े।

उनमें सेवा और साधुता के सद्‌गुण थे, इसीलिए जूनागढ़ से सद्‌गुरु स्वामी नारायणदासजी ने तीन बार संदेशा भेजा कि 'आप यदि यहाँ - जूनागढ़ वापस लौटें तो आपके स्वागत के लिए मैं जेतपुर तक आऊँ और बड़े जुलूस के साथ आपको जूनागढ़ ले चलूँ।'

ज्ञानजी स्वामी - योगीजी महाराज को शास्त्रीजी महाराज के साथ रहकर बहुत काम करने थे, अत: वे कैसे जूनागढ़ आते?

राजकोट में जब वे थे तो एकबार उनसे कोई छोटी-सी गलती हो गई। मंडल के मुखिया विज्ञानदास स्वामी उन पर क्रुद्ध हो गए और भोजन करते समय योगीजी को पंगत से उठा दिया। हरगोविंददास मेहता यह देख रहे थे। उन्होंने एकान्त में योगीजी महाराज से पूछा, 'योगीजी! आप इतना क्यों सह लेते हैं? क्या ऐसे मौके पर आपको घर भाग जाने की इच्छा नहीं

होती?' योगीजी महाराज ने हँसते-हँसते उत्तर दिया कि 'जी नहीं, गुरु! यदि उलाहना भी देते हैं तो वह हमारी भलाई के लिए ही देते हैं, बिना डाँटे सावधानी नहीं आती। हम सचिन्त नहीं रहते। इस प्रकार के दण्ड से हमारी भूल सुधरती है। गुरु की डाँट तो वास्तव में भला ही करती है।'

यह सुनकर हरगोविंदभाई चकित हो गए। योगीजी महाराज के आगे वे नतमस्तक हो गए।

15. मान-अपमान में समता

योगीजी महाराज अब 'शास्त्रीजी महाराज की मण्डली के साधु' के रूप में पहचाने जाते थे। एकबार सन्त-मण्डली के साथ विचरण करते हुए योगीजी महाराज भावनगर जिले के केरिया गाँव में पधारे। वहाँ के मंदिर में वे सभी ठहरे थे। उस दिन योगीजी महाराज का निर्जल उपवास था। सभी सन्त दोपहर को आराम कर रहे थे, केवल योगीजी महाराज अकेले मंदिर में भगवान का ध्यान कर रहे थे। इसी बीच कुछ द्वेषी साधु मंदिर में आए और साधुओं के कपड़े तथा सामान बाहर फेंक दिया, पानी के मटके फोड़ दिए। योगीजी महाराज उम्र में सब साधुओं में छोटे थे। उनका हाथ

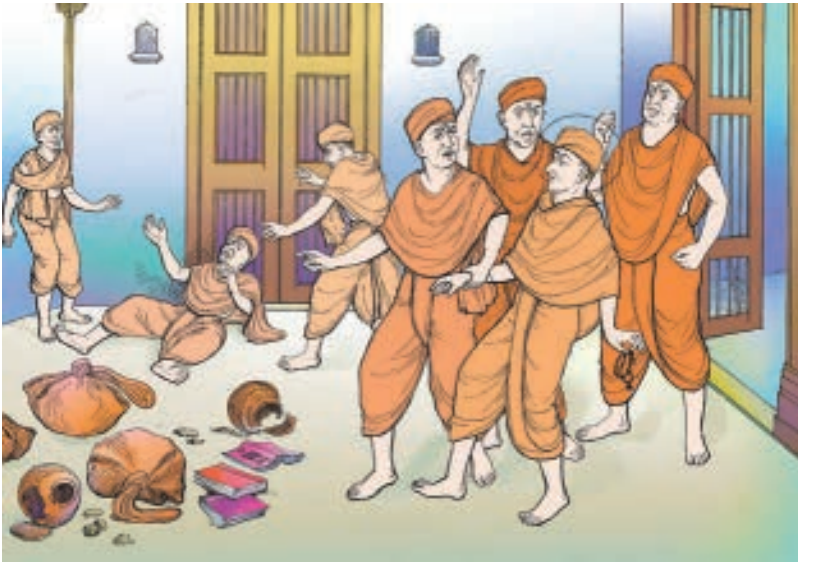

पकड़कर द्वेषियों ने धक्का मारकर उन्हें मंदिर के बाहर कर दिया। इतना ही नहीं, सद्‌गुरुओं के विषय में अपशब्द भी कहे, 'रो ले अपने गुणातीत को, वह तुझे छुड़ाएगा।' इतना कहकर एक प्रज्ञाचक्षु (नेत्रों से अंध) संत भगवत्स्वरूपदास को जाली पर पटक दिया, दूसरे एक साधु को कोने में ले जाकर गिरा दिया, किसी साधु को मुक्के मारे और विज्ञानदास स्वामी को जाली के भीतर बंद कर दिया।

इतने में होहल्ला सुनकर गाँव के कुछ हरिभक्त लाठियाँ लेकर वहाँ पहुँचे। उन द्वेषी साधुओं को डरा-धमकाकर वातावरण शान्त कर दिया।

इस प्रकार अक्षरपुरुषोत्तम के विरोधी साधुओं ने गालियाँ दीं, अपमान किया, मार मारी, फिर भी योगीजी महाराज और उनके साथी सन्त-साधुओं ने एक अक्षर भी उन द्वेषियों के विरुद्ध नहीं कहा, हँसते-हँसते सबकुछ सहन कर लिया।

कितनी नम्रता! कितनी साधुता! 'मान-अपमान में एकता, सुख दु:ख में समभाव' यह सूत्र हमें भी याद रखना चाहिए।

16. सेवामय सन्त

योगीजी महाराज की उम्र उस समय छोटी थी; लेकिन उनकी सेवा बहुत बड़ी थी। सुबह से शाम तक वे सेवा ही किया करते थे। कभी वे थकावट महसूस ही नहीं करते थे। बिना सेवा के उनको चैन कहाँ? निर्जल उपवास के दिन भी रोज की तरह ही सेवा करते थे, सुस्ती उनको कभी छूती तक नहीं थी।

प्रात:काल में उठकर स्नान से निवृत्त होकर, वे तुरन्त रसोईघर में पहुँच जाते और सौ रोटियाँ बना डालते। रोटियाँ बनाते समय भी गुणातीतानन्द स्वामी के उपदेशामृत से कुछ कंठस्थ पंक्तियाँ कहते जाते और कभी भजन भी गाते रहते। चाहे कितने भोजन करनेवाले हों वे सबकी रसोई स्वयं बनाते थे। परोसने का काम भी वे ही करते। रसोई तैयार होते ही 'वासुदेव हरे' की पुकार लगाते और सबको भोजन के लिए बुलाते, सारे सन्तों को - हरिभक्तों को भोजन कराने के बाद ही वे स्वयं भोजन करते।

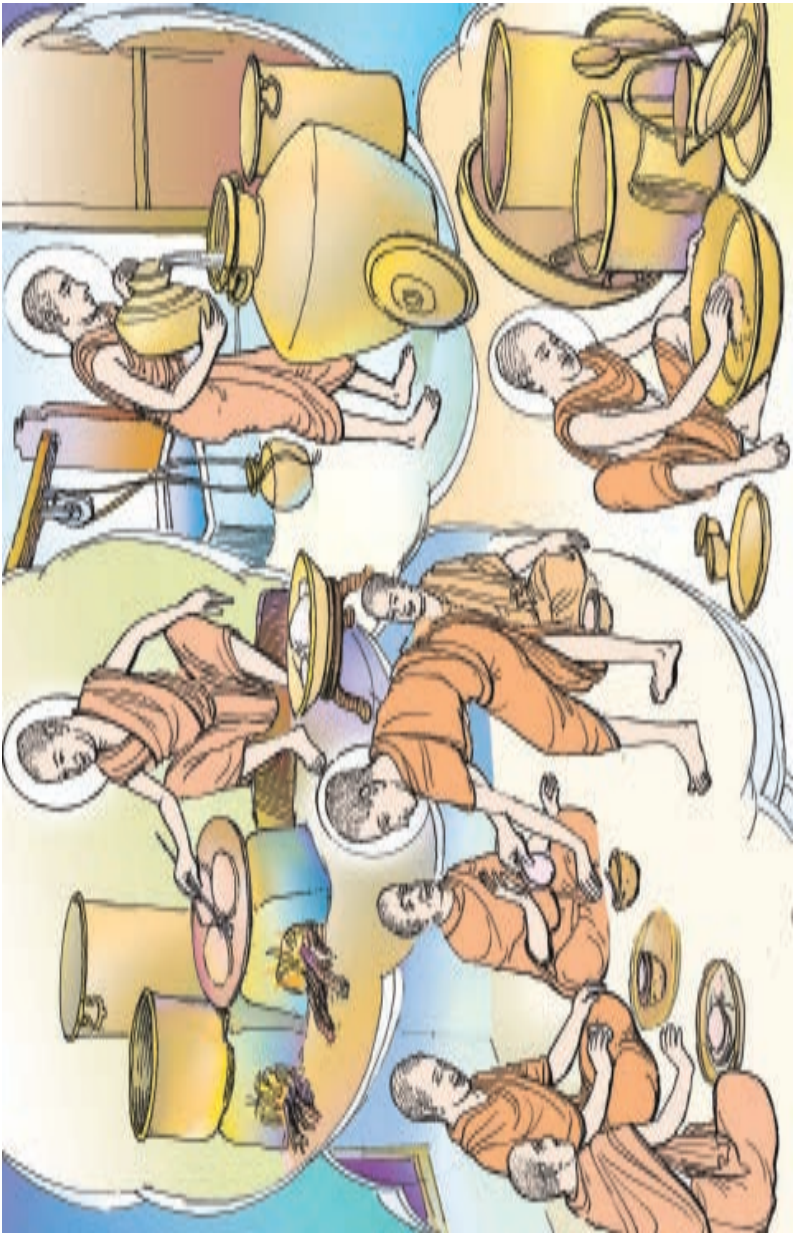

इसके पहले वे स्वयं ही सबके नहाने के लिए और रसोई के लिए कुएँ से पानी निकालकर भर लेते थे। मटके और बड़े-बड़े बरतन साफ़ करके, उनमें कपड़े से छानकर पानी भरते।

इतनी सेवा और भोजन से निवृत्त होने के पश्चात् वे रसोई और भोजन के छोटे-बड़े सारे बर्तन साफ़ करते।

उनका इस प्रकार का सेवामय जीवन हमें सेवाभावी बनने की ओर जरूर संकेत करता है।

17. सच्चा साधु

सत्संग के प्रचार हेतु सभी सन्त एक गाँव से दूसरे गाँव का विचरण करते रहते थे। न दिन देखते, न रात। जहाँ जाते वहाँ आटे की भिक्षा माँग लाते और उसी से अपना गुज़र बसर करते थे। एकबार सांकरदा गाँव में सन्त मण्डली ठहरी थी। सारे सन्त प्रतिदिन भिक्षा के लिए जाते थे। योगीजी महाराज अन्ध साधु भगवत्स्वरूपदासजी को अपने साथ ले जाया करते थे। एक हाथ में झोला-थैली आदि रखते थे। लोग आटा-अनाज जो कुछ देते, उसे वे अपने झोले में डाल लेते थे। दूसरे हाथ से

भगवत्सवरूपदासजी को भी अच्छी तरह थामे रहते थे। रास्ते में उन्हें कोई कंकड़-काँटा न लग जाए, इस बात का वह पूरा ध्यान रखते थे। भिक्षा में जो कुछ भी मिल जाए, उसकी रसोई तैयार करके, भगवान को भोग लगाकर, सन्तों को खिलाने के बाद स्वयं खाते थे। यह उनका एक स्वाभाविक क्रम बन गया था।

अड़वाल गाँव के करसनसंग बापू ने एक अन्ध वृद्ध साधु को साथ लेकर, उनका हाथ पकड़कर साथ ले जाते हुए योगीजी महाराज को कईबार देखा। एकबार गर्मी के दिनों में उन वृद्ध साधु के साथ झोला लेकर नंगे पाँव योगीजी महाराज को जाते देखकर, उनके दिल में करुणा जाग उठी। वे बोले, 'महाराज! किसी युवान साधु को साथ क्यों नहीं रखते? वृद्ध अन्ध साधु को साथ रखना और झोला लेकर भिक्षा माँगने में आपको कितना कष्ट हो रहा है?'

योगीजी महाराज ने हँसते हुए नम्रतापूर्वक उत्तर दिया, 'बापू! वृद्ध साधु का साथ मिलना भी भाग्य की बात है। वृद्ध साधुओं की सेवा, बिना सद्भाग्य के नहीं मिलती। उनके साथ घूमने से भी बड़ा लाभ होता है। बातों-बातों में आसानी से उनके ज्ञान एवं अनुभव का लाभ होता ही है और झोला लेकर भिक्षा माँगने से मंदिर की सेवा भी होती है।'

एकबार योगीजी महाराज मोजीदड़ गाँव से नारायणधरा झरने पर स्नान करने गए थे। रास्ते में नारायणप्रसाद नामक एक द्वेषी साधु ने उनका बहुत अपमान किया; इतना ही नहीं अपशब्द भी कह डाले। योगीजी महाराज हँसते-हँसते उनको 'स्वामीजी, महाराजजी' इत्यादि आदरवाचक सम्बोधन करते हुए स्नान से निवृत होकर अपने निवास पर पहुँच गए।

कुछ दिनों के बाद - बरसात के दिनों में साधु नारायणप्रसाद रात को करीब दो बजे बोटाद स्टेशन पर उतरे। बरसात और अंधेरी रात होने के कारण ताँगेवाले ने कारियाणी गाँव ले जाने की उन्हें ना कह दी। वे कीचड़ में चलकर परेशान होकर किसी तरह सारंगपुर मंदिर में पहुँचे। मार्ग में कहीं पर उनके पैर में काँटा चुभ गया था, पैर सूज गया था, काफ़ी पीड़ा थी। चौकीदार ने पुकारा, 'योगीजी महाराज! नारायणप्रसाद नामक कोई साधु आए हैं, यहाँ रातभर ठहरना चाहते हैं।'

साधु का नाम सुनते ही योगीजी महाराज आगन्तुक साधु को आदर के साथ अन्दर लाये और उनके पैर में चुमे काँटे को निकालकर पट्टी बाँध दिये। ठाकुरजी के थाल के लड्डू एवं पूरियाँ परोसकर उनको खिलाया एवं बिछौना बिछाकर उनसे विश्राम करने को कहा। नारायणप्रसाद को कारियाणी गाँव जाना था, अत: उनके लिए बैलगाड़ी की व्यवस्था भी करवा दी। रात के अंधेरे में नारायणप्रसाद शायद उनको नहीं पहचान सके थे। सुबह जब उन्हें पता चला कि इतनी सेवा करनेवाले साधु कोई और नहीं – योगीजी महाराज ही हैं, तो उनका हृदय पिघलकर मोम बन गया। मन ही मन उन्होंने सोचा कि 'जिनको मैंने अपमानित किया था, जिनको मैंने गालियाँ दी थीं, वे ही ये हैं, जिन्होंने उस वक़्त एक भी कटु शब्द नहीं कहा था। आज उन्होंने मुझे प्रेम से वाकई जीत लिया।' साधु को बहुत पश्चात्ताप हुआ। वे योगीजी महाराज के चरणों में गिर पड़े और बोले, 'उपकार से अपकार का बदला लेनेवाले, आप वास्तव में निरभिमानी प्रेममूर्ति संत हैं। वैर को प्रेम से शान्त करनेवाले आप श्रीजीमहाराज के आदर्श शिष्यरत्न हैं, पूर्ण परमहंस हैं।'

योगीजी महाराज का आशीर्वाद लेकर वे बैलगाड़ी में बैठकर कारियाणी प्रस्थान कर दिये।

18. मंदिर की सेवा में

योगीजी महाराज को सन्तों और हरिभक्तों की सेवा में जितना प्रेम था, उतना ही प्रेम मंदिर एवं ठाकुरजी की सेवा में था। सेवा में कभी थकावट और भूख की वे परवाह नहीं करते थे। वे हमेशा गुरुदेव शास्त्रीजी महाराज की आज्ञा का पालन करते थे, उनकी सेवा करते थे, इतना ही नहीं; उनके प्रत्येक कार्य में निष्ठापूर्वक सहायता भी करते थे।

गुरुदेव शास्त्रीजी महाराज ने सबसे पहले बोचासण में मंदिर बनवाया और उसमें अक्षरपुरुषोत्तम की मूर्ति की स्थापना की। उसके कुछ समय बाद सारंगपुर में मंदिर बनवाने की शुरुआत की। उस वक़्त रुपयों की भी कमी थी, इसलिए साधुओं, पार्षदों और हरिभक्तों ने उस काम में शारीरिक सेवा भी प्रदान की थी। योगीजी महाराज दैनिक नित्य सेवाओं से निवृत्त होकर

मंदिर बनवाने के काम में लग जाते थे। पत्थर सिर पर उठाकर वे राज़गीर मिस्त्रियों को देते। फावड़े से चूना, रेती आदि की टोकरियाँ भरकर सिर पर उठाते। नींव को खोदने और भरने का काम भी करते। वैसे उम्र में वे सबसे छोटे थे, पर सेवा में सबसे अव्वल थे।

उनके मन में एक ही भावना थी कि मंदिर बन जाने पर उसमें अक्षरपुरुषोत्तम भगवान की मूर्ति की स्थापना करनी है। सेवा का सुनहरा अवसर मिला है, तो उसका लाभ ले लेना चाहिए, ऐसे अवसर बार-बार नहीं मिला करते। सेवा से ही परमात्मा प्रसन्न होते हैं, चाहे वह देवसेवा हो या गुरुसेवा।

योगीजी महाराज की ऐसी सेवाभावना और प्रेम देखकर शास्त्रीजी महाराज बहुत प्रसन्न होते थे। वे बार-बार उन्हें आशीर्वाद देते थे, उनकी प्रशंसा भी करते थे।

19. श्रीजी-स्वामी वश में हैं

सारंगपुर में जलझुलनी परिवर्तिनी एकादशी का उत्सव था। शास्त्रीजी महाराज की तबियत उस समय ठीक नहीं थी, वे आराम कर रहे थे। उस

समय भावनगर से कुछ हरिभक्त आए, उन लोगों ने वह उत्सव वहीं मनाया। उनके अग्रणी हरिभक्त कुबेरभाई ने शास्त्रीजी महाराज से विनती की कि 'दयालु! आप एकबार भावनगर पधारिए, जिससे कि हम सबको सत्संग का सौभाग्य प्राप्त हो।'

शास्त्रीजी महाराज ने हँसते हुए कहा कि 'आप लोग देख रहे हैं कि मेरी तबियत अच्छी नहीं है, मेरे बदले में आप लोग योगीजी महाराज को ले जाइए, वे आएँ तो समझ लीजिए मैं ही आ गया हूँ।' शास्त्रीजी महाराज की आज्ञा से वे प्रसन्न हुए और योगीजी महाराज को साथ लेकर वे भावनगर

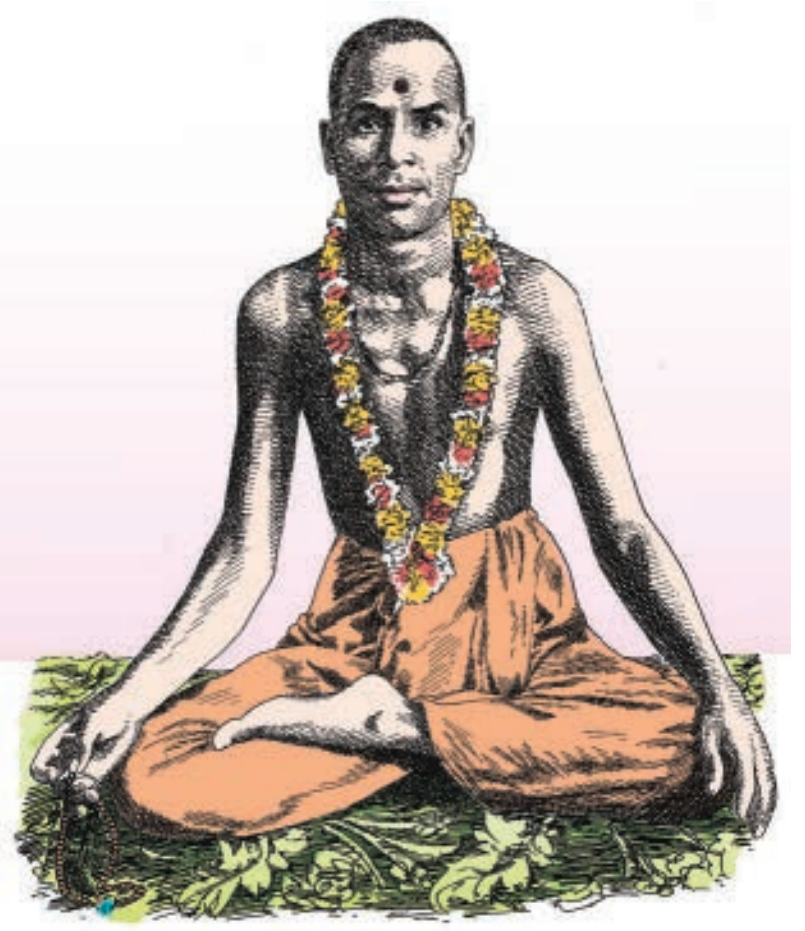

गए।

भावनगर में प्रभुदास सेठ के भान्जे जयन्तीभाई पटेल रहते थे। उन्होंने अपने यहाँ योगीजी महाराज और सन्तों को भोजन के लिए आमंत्रण दिया। उन्होंने पवित्र ब्राह्मणों द्वारा लड्डू, दाल, भात, पकौड़ी आदि पदार्थ बनवाए। भोजन तैयार हो जाने पर जयन्तीभाई, प्रभुदास सेठ को साथ लेकर योगीजी महाराज के पास गए और उन्होंने उनसे निवेदन किया कि 'श्रीजीमहाराज और अक्षरब्रह्म गुणातीतानन्द स्वामी आपके वश में हैं, आज वे स्वयं यहाँ पधारकर भोजन करें, ऐसी प्रार्थना कीजिए।'

योगीजी महाराज ने हँसते हुए कहा कि 'चलिए, हम प्रार्थना करें, श्रीजीमहाराज और गुणातीतानंद स्वामीजी साक्षात् भोजन के लिए यहाँ पधारेंगे।' इतना कहकर वे पूजा के कमरे में गए और ठाकुरजी के सामने भोजन का थाल रखा। चाँदी के लोटे में जल रखा और पर्दा डाल दिया। योगीजी महाराज आसन स्थिर करके वहीं बैठ गए। चारों ओर हरिभक्त उनको घेरकर बैठ गए। योगीजी महाराज ने 'आविनाशी आवो रे...' थाल-नैवेद्यगान भावपूर्वक गाना शूरू कर दिया।

आधा घण्टा बीत जाने पर ठाकुरजी को आचमन कराया, पर्दा हटाकर देखा तो सब आश्चर्यचकित हो गए! थाल में पाँच लड्डू, दाल, भात, साग आदि जो कुछ था, कम हो गया था। जल से भरा लोटा भी आधा खाली हो गया था। सारे हरिभक्त योगीजी महाराज के भक्तिभाव को देखकर दिग्मूढ़ रह गए, उनको विश्वास हो गया कि श्रीजी-स्वामी योगीजी महाराज के वश में हैं।

20. पराभक्ति

एकबार योगीजी महाराज बैलगाड़ी में बैठकर सारंगपुर से गढडा जा रहे थे, साथ में निर्गुणदास स्वामी भी थे। रास्ता निर्जन और शान्त था। गर्मी के दिन थे। रास्ते में कहीं जलाशय-नदी-कुआँ का नामोनिशान नहीं था। दोपहर के चार बज चुके थे।

योगीजी महाराज के पास गुणातीतानंद स्वामी द्वारा पूजित छोटी-सी हरिकृष्ण महाराज - भगवान स्वामिनारायण की मूर्ति थी। उसको जल अर्पण करने का समय हो चुका था। वे व्याकुल हो उठे। वे कहीं से भी पानी प्राप्त

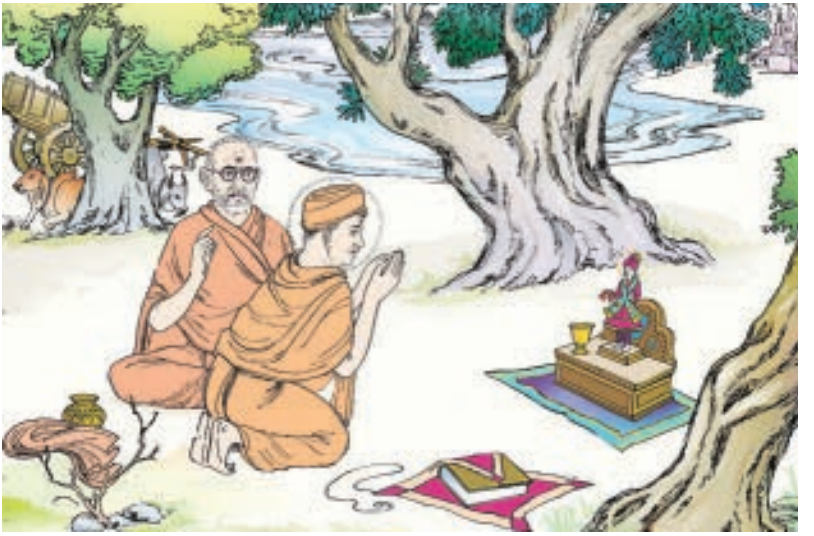

करने की गहरी सोच में थे और चिन्ता कर रहे थे कि 'यदि पानी नहीं मिला तो भगवान प्यासे रहेंगे, उनका गला सूख जाएगा।'

शाम के छः बज चुके थे। मार्ग में दूर पर एक नदी दिखाई दी। वे नदी के निकट गए। उन्होंने किनारे पर बैलगाड़ी खड़ी करवा दी, नीचे उतरकर हरिकृष्ण प्रभु की मूर्ति निकाली, उसको नदी के जल से स्नान कराया और शुद्ध जल निवेद किया।

भगवान को बार-बार दण्डवत् प्रणाम करके प्रार्थना करने लगे कि 'प्रभो! क्षमा कीजिएगा, मुझसे बड़ा भारी अपराध हो गया, आपको समय पर मैं जल नहीं दे सका।' यह सुनकर निर्गुणदास स्वामी कहने लगे, 'हम सफ़र में थे, रास्ते में कहीं जल नहीं मिला, इसलिए हम समय पर भगवान को जल निवेद नहीं कर सके, इसमें हमारा क्या अपराध?'

योगीजी महाराज तो भावनापूर्ण हृदय से बार-बार क्षमा माँगते ही रहे और प्रार्थना करते ही रहे! कैसी अद्‌भुत भक्ति! कैसी अनुपम सेवा! कैसी नम्रता! चलिए, हम भी ऐसी ही भक्ति, सेवा और नम्रता का अनुकरण करें।

21. सर्प-दंश

गोंडल में अक्षरब्रह्म गुणातीतानन्द स्वामी का देहोत्सर्ग स्थान

'अक्षरदेहरी' है, उस पर शास्त्रीजी महाराज एक भव्य मंदिर बनावाने का कार्य प्रारम्भ कर रहे थे। उस समय योगीजी महाराज भी साथ में थे। उनको अक्षरदेहरी की सेवा करना बहुत पसंद था। वे सुबह चार बजे उठ जाते। नित्यक्रम से निवृत्त होकर वे उस छोटे मंदिर में जाकर श्रीजीमहाराज के चरणारविंदों की पूजा करते। आरती, नैवेद्य आदि से महापूजा भी करते।

मंदिर बनावाने का काम शुरू हो गया था। योगीजी महाराज, सन्तों के साथ मिट्टी के कच्चे घर में – झोंपड़ी में रहते थे। एकबार रात को वे वहाँ सोए हुए थे। मध्यरात्रि में एक भयंकर काले साँप ने उनके बायें हाथ की पहली उँगली – तर्जनी पर दंश दिया। उँगली में से लहू की धारा बहने लगी। साँप ज़हरीला था, इसीलिए उन्हें सख्त पीड़ा हो रही थी। सारे शरीर में पीड़ा फैल गई। योगीजी महाराज की आँखें बन्द हो गईं, फिर भी 'स्वामिनारायण' मंत्र का जाप वे करते रहे।

कोई वैद्य को तो कोई डॉक्टर को बुलाने के लिए कहता। कुछ लोग दूसरे उपायों की भी चर्चा करने लगे। इतने में शास्त्रीजी महाराज वहाँ पधारे और बोले, 'योगीजी महाराज को अक्षरदेहरी में ले चलो और

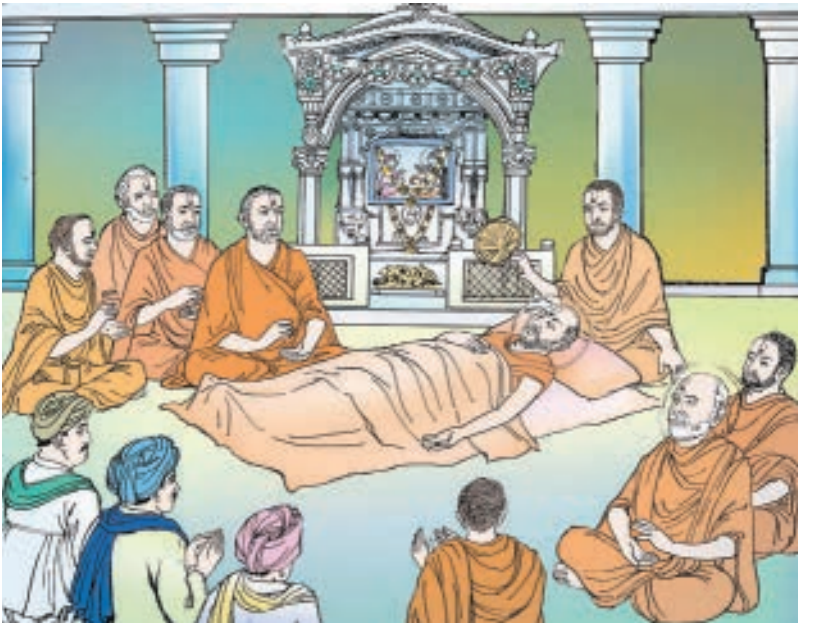

'स्वामिनारायण' नाम की धुन रटना शुरू कर दो; उनके मन्त्र-जाप से ज़हरीले साँप का भी विष उतर जाएगा।' सभी सन्त तुरन्त उन्हें अक्षरदेहरी में ले गए और शास्त्रीजी महाराज की आज्ञानुसार ठाकुरजी के सामने सुलाकर धुन गाने लगे।

ठीक बारह घण्टों के बाद पूरा ज़हर उतर गया! योगीजी महाराज ने आँखें खोलीं। शास्त्रीजी महाराज की उन्होंने चरणवन्दना की। सरकारी डॉक्टर, जो उस समय वहाँ दर्शन करने आए थे, यह दृश्य देखकर चकित हो गए। वे तो शास्त्रीजी महाराज के चरणों में गिर पड़े, गोंडल के महाराजा एवं उनके पदाधिकारी आश्चर्य में डूब गए।

22. अक्षर मंदिर के महन्त

संवत् 1991 में गोंडल मंदिर का अधिकांशत: काम हो चुका था। उसी साल वैशाख शुक्ला दशमी के दिन शास्त्रीजी महाराज ने अक्षरमंदिर में शास्त्रोक्त विधि से मूर्तिप्रतिष्ठा की। उसके बाद मंदिर के आँगन में बहुत बड़ी सभा हुई। उस समय हज़ारों हरिभक्तों की उपस्थिति में शास्त्रीजी महाराज ने योगीजी महाराज को गोंडल मंदिर के महन्त के रूप में घोषित किया। उन्होंने महन्त पद के प्रतीक के रूप में योगीजी महाराज के गले में पुष्पमाला अर्पित की। सारी सभा ने तालियाँ बजाकर, आनन्द व्यक्त करके उस घोषणा को स्वीकृति दी। योगीजी महाराज का आदर किया।

अक्षरमंदिर मानो योगीजी महाराज का सर्वस्व है! उसमें भी अक्षरदेहरी (छोटा-सा मूलमंदिर) तो मानो उनका प्राण है। अक्षरदेहरी की प्रदक्षिणा करते हुए वे कभी नहीं थकते। सुबह साढ़े तीन बजे उठकर सर्व प्रथम वे अक्षरदेहरी की सफ़ाई करते, उसमें श्रीहरि के प्रासादिक पत्थर में कुरेदे हुए चरणारविन्दों की पूजा चन्दन, पुष्प आदि से करते। आरती करने के बाद वे हरिभक्तों को कथा सुनाते। देहरी में महापूजा करने का उनका नित्यक्रम था, उसमें विशेष साधु सम्मिलित हों और सत्संग बढ़े, इस दृष्टि से धुन का कार्यक्रम भी रखते थे। बही-खाते में पूरा हिसाब स्वयं लिखते थे। ठाकुरजी की सेवा एवं मेहमानों की सेवा-शुश्रूषा भी करते थे। अधिक हरिभक्तों के आने पर वे अधिक प्रसन्न होते और बिना भोजन कराये कभी

वे, उन्हें जाने नहीं देते थे।

उस समय राणा दाजीबापू कामकाज में उनकी सहायता करते थे। एक दिन दाजीबापू को हिसाब के सम्बंध में योगीजी महाराज से कुछ पूछने की जरूरत पड़ी। वे कोठार में गए, इधर-उधर देखा, योगीजी महाराज दिखे नहीं। वे अक्षरदेहरी में गए, ठाकुरजी के स्थान में गए, किन्तु वहाँ भी कहीं वे नहीं मिले। सब जगह खोजते-खोजते जब वे रसोईघर में पहुँचे तो देखा कि वहाँ वे चुपचाप अकेले ही रसोई बना रहे थे। दाजीबापू को बड़ा आश्चर्य हुआ। इतने बड़े मंदिर में, जहाँ कि अनेक साधु-सन्त हैं, महन्तजी को रसोई करते देखकर वे बोल उठे, 'मैं तो कब से आपको खोज रहा हूँ, आप भोजन बनाने क्यों बैठ गए हैं? भंडारी साधु कहाँ गए?'

योगीजी महाराज ने कहा, 'आज भंडारी साधु बीमार हो गए हैं। श्रीजीमहाराज की कृपा से आज इस सेवा का लाभ मुझे मिला है। बहुत दिनों से सोच रहा था कि मैं भोजन बनाकर, थाल सजाकर ठाकुरजी को भोजन कराऊँ, आज मेरी वह इच्छा पूरी हुई।'

ये शब्द सुनकर दाजीबापू चकित रह गए। उन्होंने पता लगाया तो मालूम हुआ कि कोई भी साधु बीमार नहीं था। आलस्य के कारण भण्डारी साधु इधर-उधर घूम रहे थे। साधुओं को उलहना देते हुए वे बोले, 'योगीजी महाराज चौबीसों घण्टे सेवा ही करते रहते हैं, उनसे रसोई का काम भी आप लोग करवाते हैं? जाइए, भण्डार - रसोई में जाइए।' सब साधुओं को सेवा में भेजकर, योगीजी महाराज को अपने साथ लेकर वे कोठार में हिसाब का काम निपटाने के लिए चले गए।

23. गुरुभक्ति

योगीजी महाराज रोजाना एक ही बार भोजन करते थे, हर तीसरे दिन निर्जल उपवास किया करते थे। उपवास के दिन भी वे गर्मी में सिर पर सामान की गठरी लेकर शास्त्रीजी महाराज के साथ एक गाँव से दूसरे गाँव जाते थे। दिन भर सेवा किया करते थे। अधिक परिश्रम के कारण उन्हें सारनगांठ (हर्निया) हो गई।

संवत् 1993 में राजकोट में अंग्रेज डॉक्टर एस्पिनॉल को बताया गया।

उन्होंने ऑपरेशन की आवश्यकता बताई। शास्त्रीजी महाराज की आज्ञा के अनुसार हीरजीभाई ने अस्पताल में अलग कमरे की व्यवस्था करवाई।

उस समय शास्त्रीजी महाराज गोंडल में स्वयं अपना औषधोपचार करवा रहे थे। वे एक दिन पहले ही राजकोट आ गए थे। मार्गशीर्ष मास की भयंकर ठंड में भी तड़के उठकर, स्नानादि से निपटकर, माथे पर पगड़ी रखकर जल्दी से अस्पताल जा पहुँचे। शास्त्रीजी महाराज जिस समय अस्पताल में दाखिल हुए, उसी समय दो सेवक योगीजी महाराज को स्ट्रेचर-गाड़ी में सुलाकर ऑपरेशन थियेटर में ले जा रहे थे।

शास्त्रीजी महाराज को अपने पास उपस्थित देखकर योगीजी महाराज पुलकित हो उठे। लेटे हुए ही हाथ ऊँचा करके उनको प्रणाम किया। शास्त्रीजी महाराज ने उनको आशीर्वाद दिए। योगीजी महाराज को क्लॉरोफॉम (बेहोशी की दवाई) देकर डॉक्टरों ने उनका कुशलतापूर्वक ऑपरेशन संपन्न किया। फिर स्ट्रेचर में सुलाकर उनके कमरे में ले जाया गया।

कमरे में एक टेबल पर हरिकृष्ण भगवान की मूर्ति रखी हुई थी। चारों ओर अनेक हरिभक्त नीचे बैठे थे। पलंग के सामनेवाली कुर्सी पर शास्त्रीजी महाराज बैठे-बैठे माला फेर रहे थे। दो घण्टों के बाद योगीजी महाराज पूरे होश में आए और अपना माथा थोड़ा-सा हिलाया, आँखें खोलीं, शास्त्रीजी महाराज बिल्कुल सामने बैठे हँस रहे थे। योगीजी महाराज ने तुरन्त हाथ जोड़े और हरिभक्तों से पूछने लगे, 'शास्त्रीजी महाराज को दूध दिया?'

ऐसी हालात में यह प्रश्न सुनते ही सारे हरिभक्त और अंग्रेज डॉक्टर एस्पिनॉल आश्चर्यचकित रह गए। उनको यह महसूस हुआ कि 'ये साधु बेहोश नहीं थे, ये साधु तो योगी पुरुष हैं, वे समाधि में रहे होंगे, नहीं तो जाग्रत होते ही गुरु की याद कैसे आती?' गोंडल में योगीजी महाराज शास्त्रीजी महाराज की सेवा में थे। उन्हें दवाई-दूध आदि दिया करते थे, यह सब उन्हें याद हो गया। कितनी एकता! कितनी गुरुभक्ति!

24. शास्त्रीजी महाराज प्रकट हैं

संवत् 2007 में (सन् 1951) में शास्त्रीजी महाराज बहुत बीमार थे।

उन्होंने कहा कि 'मैंने गढडा की मूर्तियों की आरती की है। अब उनकी प्रतिष्ठा योगीजी महाराज करेंगे। मुझ में और योगीजी महाराज में तिलभर भी फ़र्क नहीं है, मुझमें योगीजी हैं और मैं योगीजी में हूँ।' ये थे उनके आखिरी शब्द। वैशाख शुक्ला चतुर्थी के दिन वे अक्षरधाम पधारे। दूसरे दिन उनकी भौतिक देह का अग्निसंस्कार किया गया। सारे हरिभक्त शोकग्रस्त हो गए थे। सब यह सोचने लगे कि 'शास्त्रीजी महाराज गए, अब हमारा क्या होगा?' इसी सोचविचार में किसी को कुछ नहीं सूझ रहा था।

उस समय योगीजी महाराज ने सबको सांत्वना देते हुए कहा कि 'शास्त्रीजी महाराज गए नहीं हैं, 'चले गए' यह मानना ही नहीं चाहिए। वे तो जहाँ सत्संग होता है, वहाँ प्रकट ही हैं।' उनके ये शब्द सुनकर सबको तसल्ली हो गई कि 'श्रीजीमहाराज शास्त्रीजी महाराज में प्रकट थे। उसी तरह आज श्रीजीमहाराज योगीजी महाराज में प्रकट हैं। शास्त्रीजी महाराज योगीजी महाराज के रूप में रहकर हमारा कल्याण करेंगे।' सभी के ज्ञानचक्षु खुल गए, सभी ने योगीजी महाराज में शास्त्रीजी महाराज के दर्शन किए।

शास्त्रीजी महाराज की स्वधामयात्रा के बाद छठे दिन अर्थात् संवत् 2007 की वैशाख शुक्ला दशमी के दिन गढडा में योगीजी महाराज के तत्त्वावधान में बड़ी धूमधाम से मूर्ति प्रतिष्ठा का समारोह किया गया। करीब पचास हज़ार हरिभक्त वहाँ उपस्थित रहे। 'शास्त्रीजी महाराज योगीजी महाराज में प्रकट हैं' इस बात की सबको प्रतीति हुई।

कुछ विरोधी लोग सोच रहे थे कि 'शास्त्रीजी महाराज चल बसे हैं, अब उत्सव, पारायण, प्रतिष्ठा आदि में कोई आएगा नहीं, अक्षरपुरुषोत्तम सम्प्रदाय अब अपने आप समाप्त हो जाएगा...।' उनका यह अनुमान बिल्कुल निर्मूल हो गया। इतना ही नहीं, गढडा में योगीजी महाराज के विशाल कार्य का प्रारम्भ हो गया, योगीजी महाराज ने सबके हृदय में स्थान पा लिया।

25. युवक मण्डल और सत्संग सभा

साप्ताहिक सत्संग सभा की प्रवृत्ति योगीजी महाराज ने बहुत समय

पहले ही शुरू कर दी थी। शास्त्रीजी महाराज के अक्षरधाम गमन के बाद उन्होंने उस प्रवृत्ति को बहुत वेग दिया। धीरे-धीरे युवक मण्डल की प्रवृत्ति भी बहुत जोरों से चलने लगी। शुरू में बहुत कम युवक एकत्र होते थे, अत: वे लोग भी निराश हो जाते थे। ऐसे समय योगीजी महाराज आश्वासन देते हुए उन्हें प्यार से कहते थे कि 'आज्ञा के पालन में तुम्हारा कल्याण है, धीरज और हिम्मत रखो। तुम्हारे इस मंडल का काम बहुत ज़ोरों से चलेगा। यह प्रवृत्ति खूब बढ़गी। नये मित्रों को, युवकों को प्रेरणा दो, उन्हें साथ में ले आओ तथा कथावार्ता सुनाओ। हमारी बातें उनके मन में बैठ गईं, तो वे अपने आप आने लगेंगे। श्रीजीमहाराज की दया से बहुत से युवक आएँगे।'

किसी कारणवश यदि कहीं युवक मण्डली का काम स्थगित या बन्द हो जाता, तो वे फिर से उसे चालू करवाते। जिस गाँव या शहर में वे पधारते वहाँ सभी जगह युवक मण्डलों की स्थापना करते रहते, उसका विवरण रखते, नियमित पत्र लिखकर उनको प्रोत्साहित करते। इस तरह कुछ ही समय में सारे भारतवर्ष में सैकड़ों युवक मण्डलों की स्थापना हो गई। छोटे-छोटे बच्चों को सत्संग का ज्ञान-लाभ मिले इस दृष्टि से जगह-जगह पर उन्होंने बाल मण्डल भी बड़ी संख्या में स्थापित किए।

योगीजी महाराज कईबार समझाते हुए कहते कि 'यदि पच्चीस हज़ार रुपये मिल रहे हों, तो उसे भी छोड़कर युवक मण्डल, सत्संग मण्डल की सभा में जाना चाहिए। हम, सबको मिलने सबके घर तो जा नहीं सकते। सत्संग सभा में जाने से कई लाभ होते हैं, कई हरिभक्तों के एक साथ दर्शन होते हैं, अनेक युवकों का साथ मिलना होता है, उनसे गहरी मित्रता होती है और साथ-साथ ज्ञान भी मिलता है। ऐसी सत्संग सभाओं में श्रीजीमहाराज, गुणातीतानन्द स्वामी एवं शास्त्रीजी महाराज अपने दिव्य रूप से बिराजमान होते हैं। इसलिए ऐसी किसी सभा में कभी भी अनुपस्थित नहीं रहना चाहिए।'

योगीजी महाराज युवकों की ऐसी प्रत्येक प्रवृत्ति में स्वयं रुचि लेते थे। प्रवचन, योग के आसन, बैण्ड, संवाद, रास, भजनकीर्तन आदि जो कुछ युवकों के द्वारा उनके समक्ष पेश किया जाता था, उसे वे बहुत प्रेम से, बहुत

ध्यान से सुनते-देखते थे और उन्हें आशीर्वाद देते थे। युवकों के द्वारा तैयार किए गए हस्तलिखित साहित्य को भी वह ध्यानपूर्वक सुनते थे। वे कहा करते थे कि 'ऐसे हस्तलिखित अंक तो हर तीन मास पर निकालते रहना चाहिए।'

हम युवक मण्डल की प्रत्येक सत्संग सभा में अवश्य जाएँ, जिसे योगीजी महाराज की प्रसन्नता में वृद्धि होगी। हमको उनके आशीर्वाद मिलेंगे।

26. युवकों के योगीराज

योगीजी महाराज को युवकों और बच्चों से बहुत प्यार था। हृदय के टुकड़े की तरह वे उनकी हिफाज़त करते थे। वे प्राय: कहते, 'युवक मेरे हृदय हैं।' वे उनको प्रेम से बुलाते, उनकी बातें रुचिपूर्वक सुनते, उनके सिर पर हाथ फेरते। साथ-साथ यह भी देख लेते कि कण्ठी-माला उनके गले में है या नहीं, यदि न हो तो पहना देते। माता से भी अधिक प्यार करके वे उनको वश में कर लेते थे।

योगीजी महाराज गर्मी एवं दिवाली की छुट्टियों में युवकों को साथ लेकर एक गाँव से दूसरे गाँव घूमते थे। उनको गुणातीतानन्द स्वामी का उपदेशामृत, वचनामृत, भजनकीर्तन, नियम-चेष्टा के पद सुनाते-सिखलाते, अपने दोनों ओर दो युवकों को साथ रखते, उनके हाथ पकड़कर चलते और कहते, 'दोनों ओर दो युवक और बीच में योगी युवक!' साथ में घूमनेवाले युवकों की अच्छी देखभाल वे रखते थे। उनको भोजन स्वयं प्रेम से परोसते, कभी उनका बिछौना बिछा देते। यदि कोई बीमार पड़ गया तो स्वयं ही उसकी सेवा शुश्रूषा करने लग जाते।

स्वयं सुबह साढ़े चार बजे उठकर, युवकों को जगाते, उनके साथ आज्ञा, उपासना एवं सेवा की बातें करते। जो युवक निर्जल उपवास करता उस पर तो वे अति प्रसन्न रहते। उसे धन्यवाद-आशीर्वाद देते। रात को ग्यारह बजे सभा की समाप्ति और नियम चेष्टा हो जाने के बाद भी युवकों को साथ लेकर एकान्त में बैठ जाते और युवकों को आपस में गुजराती, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में प्रश्नोत्तरी करवाते। वे इतने खुश हो जाते

कि स्वयं कुछ अंग्रेजी शब्द बोलकर युवकों को खुश कर देते।

कॉलेज में अध्ययन करनेवाले आज के नवयुवकों को बड़ी आसानी से योगीजी अपने वश में कर लेते। सिगारेट, पान, सिनेमा, नाटक आदि दुर्व्यसनों से उन्हें मुक्त करते, सादगी और संयम से जीने की वे उन्हें प्रेरणा देते, आदर्श भारतीय नागरिक बनाते। इस तरह छुट्टी के दिनों में भी वे प्रतिवर्ष युवकों को साथ में लेकर घूमते और बिदाई के समय उनको उपदेश देते कि 'धर्म-नियम का पालन करना, युवक मण्डल में नियमित जाना, तुम्हारे अपने गाँव में यदि ऐसा मण्डल न हो तो स्थापित करना। हम तुम्हारे साथ पत्रव्यवहार करेंगे।' इतना कहकर मंदिर के दरवाजे तक वे उन्हें पहुँचाने जाते।

प्रेममूर्ति योगीजी महाराज से अलग होते समय युवकों की आँखें श्रद्धा पूर्ण आँसुओं से भीग जाती थीं।

27. युवकों को दीक्षा

केवल दस ही वर्षों में योगीजी महाराज ने युवकों का एक सुन्दर वृन्द तैयार कर लिया था। युवकों के लिए योगीजी महाराज की आज्ञा अक्सर यही रहती कि अपने घर पर भी सादगी से जीएँ। प्रति पाँच दिनों के बाद उपवास करें, बिना सिरहाने वे चटाई पर ही सोएँ, ठण्डे जल से स्नान करें, तिलक लगाएँ, बाहर का नहीं खाएँ, सिनेमा-नाटक कभी नहीं देखें।

योगीजी महाराज के उपदेश से, ऐसे कई सुरक्षित नवयुवक साधु बनने को तैयार हो जाते तो वे कहते, 'बनाना है, बनोगे न?' उनके प्रेमभरे इन शब्दों को सुनकर पढ़े-लिखे अनेक युवक उनके चरणों में समर्पित होने के लिए तैयार हो जाते हैं।

साधु होने की प्रबल इच्छावाले एक युवक को योगीजी महाराज ने पत्र में लिखा था कि 'तुम्हें साधु बनाकर मैं तुमसे अपनी सेवा करवाना नहीं चाहता, मैं तो तुम्हें ब्रह्मविद्या सिखलाकर तुमसे एकान्तिक धर्म सिद्ध करवाना चाहता हूँ; तुम्हारा आत्यन्तिक कल्याण हो ऐसा करना चाहता हूँ; तुम्हारे द्वारा लाखों को सत्संग का लाभ मिले; तुम अक्षरपुरुषोत्तम सिद्धांत तथा उनकी सेवा की भावना सारे जगत में फैलाओ। बस, यही मेरी कामना

है।' ऐसे कईं युवकों के माँ-बाप ने योगीजी महाराज के उस महान आशय को समझकर हँसते चेहरे से अपने सुशिक्षित प्यारे पुत्रों को उनके चरणों में समर्पित कर दिया था। कॉलेज के सुशिक्षित युवकों का एक बड़ा समूह इन दिनों त्यागी दीक्षा लेने के लिए लालायित रहता था।

संवत् 2017 की वैशाख कृष्णा द्वादशी के दिन योगीजी महाराज की इकहत्तरवीं जन्मजयंती के उपलक्ष्य में गढ़पुर मंदिर के शिखरों पर सुवर्ण कलशों की स्थापना हुई। उस अवसर के साथ-साथ योगीजी महाराज ने 51 नवयुवकों को भागवती दीक्षा देकर साधु बनाया। अक्षरपुरुषोत्तम सम्प्रदाय के आध्यात्मिक इतिहास में यह दिवस सुनहरे अक्षरों में अंकित हो गया। सुवर्णकलशों की स्थापना और इतने शिक्षित युवकों को साधुदीक्षा देने का विक्रम वहाँ एक ही दिन में सम्पन्न हुआ था! ऐसा अवसर भगवान स्वामिनारायण के बाद पहले कभी नहीं हुआ था। इसका सारा यश योगीजी महाराज को ही समर्पित है।

इसके बाद तो यह सिलसिला जारी ही रहा। देश के और अफ्रीका के नैरोबी, मोम्बासा तथा ईंग्लैण्ड के लंदन आदि बड़े-बड़े शहरों से आए कई पढ़े-लिखे युवकों ने योगीजी महाराज से साधुदीक्षा ली, सत्संग के प्रचार में एक ज्वार-सा आया। यह युवान सन्त मंडल देश-विदेशों में घूम फिरकर सम्प्रदाय का प्रचार करने लगे। नवयुवकों ने योगीजी महाराज के इस महान कार्य में अपने आपको समर्पित कर दिया।

28. योगीजी महाराज का कार्य

अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण सम्प्रदाय के विस्तार हेतु योगीजी महाराज ने कमर कस ली थी। वे रात-दिन का विचार किए बिना गाँव-गाँव घूमने लगे। वे जहाँ जाते, वहाँ उनका अत्यंत सम्मान होता था। सत्संगी होने के लिए 'वर्तमान धारण विधि' के लिए मुमुक्षुओं की लम्बी कतारें लग जाती थीं। उत्सवों और सत्संग समारोहों की परंपरा चल निकली थी। सत्संगियों का समुदाय भी काफ़ी बढ़ता जा रहा था। योगीजी महाराज ने गाँव-गाँव में सत्संग मण्डल स्थापित कर दिए थे। पूरा तंत्र सुव्यवस्थित रूप से चलता रहे, इसलिए वे बार-बार पत्रों द्वारा मार्गदर्शन देते रहते थे।

दो बार तो अखिल भारतीय यात्रा ट्रेन का आयोजन करके सन्तों हरिभक्तों को पूरे देश की यात्रा करवाई अथवा यों कहिए योगीजी महाराज ने कईं तीर्थ पावन किए। कई मुमुक्षुओं को सत्संग की ओर आकर्षित किया। हरिभक्तों को आज्ञा करके, सरकार को सिफारिश करके 'छपिया स्वामिनारायण' नाम का रेलवे स्टेशन शुरू करवाया। इसी कारण छपिया गाँव में योगीजी महाराज का भव्य स्वागत-सम्मान हुआ था।

शास्त्रीजी महाराज के संकल्प के अनुसार योगीजी महाराज ने संवत् 2010 (सन् 1954) में बम्बई में 'अक्षर भवन' नाम से सुन्दर मंदिर स्थापित किया। उसी साल वैशाख शुक्ला सप्तमी को अहमदाबाद (शाहीबाग) में पाँच शिखरवाले भव्य मंदिर का निर्माण करके, सुन्दर मूर्तियों की प्रतिष्ठा भी की। अपने गुरुवर शास्त्रीजी महाराज के जन्मस्थान महेलाव गाँव में सुन्दर मंदिर का आयोजन किया। जन्मस्थान पर ही शास्त्रीजी महाराज की संगमरमर की प्रतिमा की प्रतिष्ठा की।

स्वामीजी की प्रतिभा से प्रेरित होकर सभी हरिभक्तों ने संवत् 2012 की वैशाख कृष्णा द्वादशी के दिन योगीजी महाराज का पैंसठवाँ जन्मजयन्ती महोत्सव बड़ी धूमधाम से सारंगपुर में मनाया गया। लगभग एक लाख हरिभक्तों ने योगीजी महाराज के यशोगान गाए और उनका उपदेश सुनकर वे धन्य हुए।

संवत् 2021 में (दि. 6-2-1965) शास्त्रीजी महाराज को प्रकट हुए सौ वर्ष पूर्ण हो रहे थे। योगीजी महाराज की उम्र उस समय चौहत्तर वर्ष की थी, शरीर की अस्वस्थता के बावजूद वे गुरुजी के शताब्दी उत्सव के निमित्त सदी के मौसम में 38 दिनों तक 82 गाँवों में विचरण करते रहे और लोगों ने सेवा के रूप में लाखों रुपये उत्सव के अवसर पर समर्पित किए। गुरु पर अपार प्रेम और श्रद्धा के कारण उनकी जन्मजयंती के निमित्त योगीजी महाराज ने शरीर की परवाह के बिना अत्यंत कष्ट उठाया और संवत् 2021 की माघ शुक्ला वसंतपंचमी के दिन अटलादरा गाँव में भव्य समारोह धूमधाम से संपन्न हुआ। इस भव्य उत्सव में आए करीब डेढ़ लाख हरिभक्तों ने उनसे गुरुभक्ति की अपार महिमा सुनी। सद्विद्या की प्रवृत्ति के हेतु विद्यानगर एवं गोंडल में छात्रालय और गुरुकुल की स्थापना की। गोंडल

में प्राथमिक और माध्यमिक शालाएँ भी शुरू करवाईं।

योगीजी महाराज की 76वीं जन्मजयंती निकट थी। देशविदेश के लाखों हरिभक्तों ने श्रीजीमहाराज के अखण्ड धारक इन महापुरुष की जन्मजयन्ती बड़े समारोह के साथ मनाने का निर्णय किया। उनके अलौकिक कार्यों का, जिसमें दर्शन हो ऐसा 'अमृतपर्व' नाम का स्मारक ग्रन्थ प्रकाशित करने का भी निश्चय किया। तदनुसार जन्मजयन्ती मनाई गई। उस अवसर पर योगीजी महाराज ने संस्था द्वारा अकाल पीड़ित जनता को अन्नदान देने के लिए सरकार को पच्चीस हज़ार रुपये समर्पित करवाए। गोंडल में मनाए गए इस उत्सव में उपस्थित दो लाख हरिभक्तों ने उनके गुणगान गाए। दुनियाभर के हरिभक्त इस अवसर पर उपस्थित थे।

अक्षरब्रह्म गुणातीतानन्द स्वामी के जन्मस्थान भादरा गाँव (जिला : जामनगर) में सभी हरिभक्तों के साथ श्रमयज्ञ करके 'गुणातीत नगर' स्टेशन बनवाया। संवत् 2025 (सन् 1969) वैशाख शुक्ला षष्ठी के दिन गुणातीत नगर में उनके जन्मस्थान पर, एक शिखर का सुन्दर मंदिर बनवाकर उसमें धाम, धामी और मुक्त की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित कीं।

योगीजी महाराज ने श्रीजीमहाराज ने पत्रों के रूप में परमहंसों से लिखे कुछ सैद्धांतिक वचनों के संकलन 'वेदरस' पुस्तक का पुनः प्रकाशन करवाया। अपने गुरु शास्त्रीजी महाराज और उनके गुरु भगतजी महाराज के जीवनचरित्र के ग्रन्थ भी तैयार करवाए। गुरुजी की जन्म-शताब्दी के निमित्त 'यज्ञपुरुष स्मृति' नामक ग्रन्थ प्रकट करवाया। अक्षरब्रह्म गुणातीतानन्द स्वामी की प्रसादीरूप अचिन्त्यानन्द-वर्णीकृत 'हरिलीलाकल्पतरुः' नामक महाग्रन्थ छपवाकर प्रसिद्ध किया। श्रीजीमहाराज का जीवन-दर्शन और वचनामृत उन्होंने हिन्दी और अंग्रेजी में तैयार करवाए। गुणातीतानन्द स्वामी का सम्पूर्ण जीवन-वृत्तान्त गुजराती में प्रसिद्ध किया। शास्त्रीजी महाराज के द्वारा संस्थापित 'स्वामिनारायण प्रकाश' सामायिक का खूब प्रचार किया, घर-घर में हरिभक्तों के हाथ में 'प्रकाश एवं पत्रिका' पहुँचा दी। प्रत्येक केन्द्र में रविवार के दिन सत्संग सभा होती थी। सभी को सत्संग सम्बन्धी नियमित मार्गदर्शन मिलता रहे इस दृष्टि से 'स्वामिनारायण सत्संग पत्रिका' नामक एक साप्ताहिक पत्रिका शुरू की।

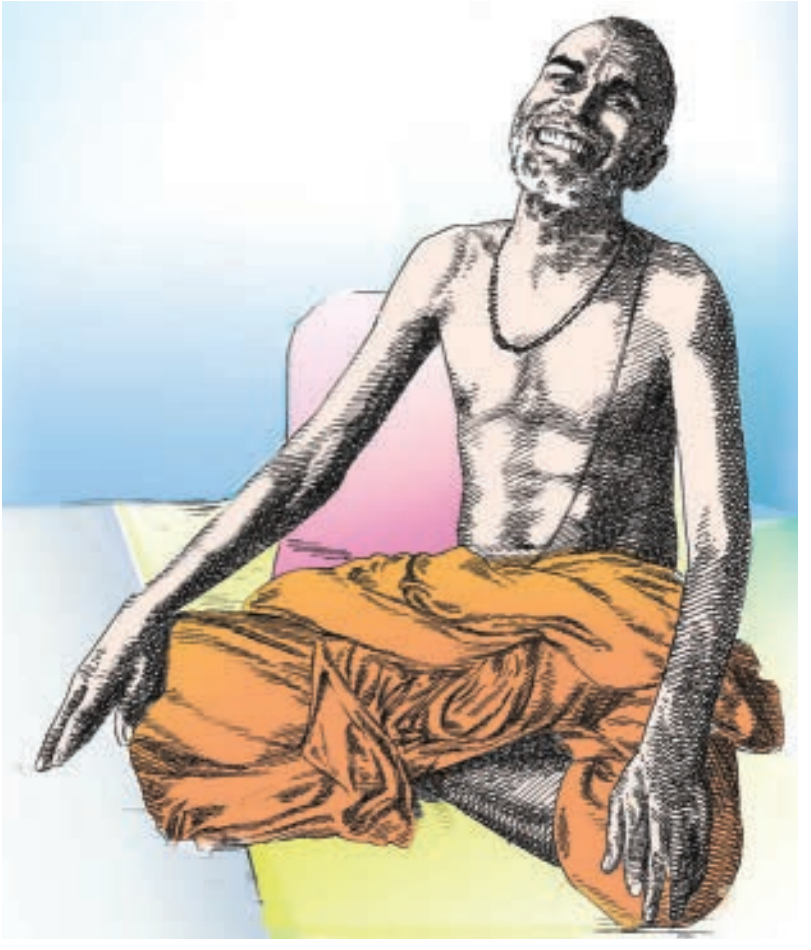

उनसे दीक्षा लेनेवाले नवयुवक सन्तों को संस्कृत का उच्च अध्ययन कराने के लिए उन्होंने मुंबई में 'संस्कृत पाठशाला' की स्थापना की। विद्वान संत भी तैयार किए। उनकी प्रेरणा एवं आशीर्वाद से कई सन्तों ने 'शास्त्री' एवं 'आचार्य' की उपाधि प्राप्त की। कुछ सन्त तो भारत सरकार की शिष्यवृत्ति पाकर 'वाचस्पति' (पीएच.डी.) भी हुए। कुछ युवान सन्तों को संगीत में पारंगत करवाया इसका पूरा यश योगीजी महाराज को ही है।

योगीजी महाराज ने सैकड़ों हरिमंदिर बनवाए। सैकड़ों पारायणयज्ञ एवं ज्ञानशिविर का आयोजन करके लाखों शिष्यों को सत्संग का लाभ दिया। लाखों की संख्या में नए सत्संगी बनाए। सत्संग का खूब विकास किया।

योगीजी महाराज की यह महानता थी कि सभी धर्मों के सन्त-महन्त और आचार्य लोग उनका अत्यंत आदर करते थे। केवल इतना ही नहीं, उनके आशीर्वाद तथा उनसे मार्गदर्शन लेने के लिए उनके पास आते रहते थे। उनका यह कहना था कि 'योगीजी महाराज केवल स्वामिनारायण सम्प्रदायवालों के ही नहीं; परन्तु सबके हैं, समग्र विश्व के हैं।' इसका कारण यह था कि वे सबको सम्मान देते थे, सर्व-धर्म-समभाव रखते थे। किसी व्यक्ति या किसी धर्म की कभी निन्दा नहीं करते थे, किसी की भी निन्दा नहीं सुनते थे। हमारे देश में और अफ्रीका में कईबार राममंदिरों में, शिवालयों में, देवी के मंदिरों में, सिक्खों के गुरुद्वाराओं में, जैनों के देरासरों में, ख्रिस्तियों के चर्चों में और कितने ही धर्माश्रमों में वे नि:संकोच गए हैं और सभी धर्मों के प्रति उन्होंने अपना आदरभाव व्यक्त किया है।

योगीजी महाराज ने लाखों विधर्मियों को स्वामिनारायण के आश्रित बनाए हैं। किसी भी धर्म या सम्प्रदाय का व्यक्ति हो, उनके सम्पर्क में जो भी आता, वह श्रद्धा से नतमस्तक हो जाता तथा सत्संगी भी हो जाता। उन्होंने कई जैन, सिक्ख, पारसी, मुसलमान, अफ्रीका के बाशिंदे-नेटिव, यूरोपियन आदि कई परधर्मी एवं परभाषाभाषी सज्जनों को सत्संगी बनाया है। इससे यह पता चलता है कि योगीजी महाराज का व्यक्तित्व कितना महान था!

मूल्यों सिद्धांतों और स्वधर्म का बलिदान देकर, कई लोग सामाजिक

सेवाओं का काम करते हैं, जिससे न तो उनकी पूरी सफलता मिलती है और न तो उनके काम शोभा देते हैं। योगीजी महाराज ने अष्टांग ब्रह्मचर्य के साथ धन का हृदय से त्याग किया था, जीवन के अन्त तक वे इन दोनों के त्याग में सुदृढ़ रहे। जीवनभर भगवान स्वामिनारायण की अल्प दिखनेवाली आज्ञा का भी यथार्थ – लकीर के फकीर बनकर उन्होंने पालन किया था, तभी वे इतने अद्‌भुत और ऊँचे कार्य सम्पन्न कर पाए। उनको सफलता भी मिली, यश भी मिला। समस्त जनसमाज में वे आदरणीय और प्रात:स्मरणीय बने।

29. अंध महाद्वीप को उजाला दिया

अफ्रीकी हरिभक्तों के सदाग्रह के वश में होकर संवत् 2012 (सन् 1955) में योगीजी महाराज सर्वप्रथम अफ्रीका और एडन के प्रवास के लिए पधारे। मोम्बासा के भव्य मंदिर में मूर्तिप्रतिष्ठा करके अक्षरपुरुषोत्तम महाराज की स्थापना की। टरोरो गाँव में (युगान्डा) मुक्तराज मगनभाई के समाधिस्थान पर चरणारविन्द स्थापित किए। हज़ारों नए सत्संगी बनाए। उत्सवों के द्वारा कितने स्थानों को तीर्थरूप किया। हज़ारों मीलों की यात्रा करके अफ्रीका जैसे अंधेरे खण्ड को उजाला दिया। अफ्रीका में अनेक युवक-मण्डलों और सत्संग-मण्डलों की स्थापना हुई। निरन्तर उनके स्नेहपूर्ण पत्रों के प्रवाह से हरिभक्तों में सत्संग का रंग चढ़ता ही गया। इतना रंग चढ़ा कि कंपाला, जींजा और टरोरो में मंदिर तैयार हो गए। इन मंदिरों में मूर्तिप्रतिष्ठा करने के लिए फिर से अफ्रीका पधारने की, वहाँ के हरिभक्तों ने योगीजी महाराज से विनती की।

इसीलिए संवत् 2017 में (सन् 1960) योगीजी महाराज पुन: अफ्रीका तथा एडन पधारे। कंपाला, जींजा और टरोरो गाँव में उन्होंने मंदिरों का निर्माण करके मूर्तिप्रतिष्ठा संपन्न की। इस धर्मयात्रा में पैंतीस हज़ार मील की यात्रा से सात देशों के कुल एक सौ तीन गाँवों में विचरण किया। हज़ारों मुमुक्षुओं को सत्संग की ओर आकर्षित किया। अफ्रीका में उत्तरोत्तर सत्संग बढ़ने लगा। युरोप के देशों में – लंदन, अमरीका और केनेडा में सत्संग के बीज बोए गए। धीरे-धीरे वहाँ सत्संगियों की संख्या बढ़ने लगी। अफ्रीका में

गुलु और नैरोबी के हरिभक्तों ने बहुत बड़ी ज़मीन खरीदकर विशाल मंदिर बनवाये। हरिभक्तों ने तीसरी बार प्रार्थनाएँ शुरू कीं। भक्तवत्सल गुरुहरि ने नाजुक और नादुरस्त तबियत होते हुए भी उनकी प्रार्थना का स्वीकार किया और तीसरी बार अफ्रीका जाने का निर्णय किया।

संवत् 2026 में (सन् 1970) योगीजी महाराज तीसरी बार विदेशयात्रा के लिए रवाना हुए। नैरोबी के राजमार्ग पर बने मंदिर में मूर्ति प्रतिष्ठा की। आखिरी यात्रा में वहाँ के हरिभक्तों को प्रसन्न किया। लंदन के हरिभक्तों ने स्वामीश्री प्रेरणा इज़्लींग्टन विस्तार में एक पुराना चर्च खरीदकर उसे भारतीय मंदिर का रूप दे दिया। इस नूतन मंदिर में मूर्ति प्रतिष्ठा करने के लिए लंदन पधारने को योगीजी महाराज को आमंत्रण दिया गया। लंदन में बसे हज़ारों सत्संगियों की भावना के वश होकर स्वामीश्री ने आमंत्रण का स्वीकार किया और वे लंदन पधारे। वहाँ के राजमार्ग पर पुलिस बैण्ड के साथ बड़ी धूमधाम से स्वागत-यात्रा निकाली गई। लंदन के मध्यभाग इज़्लींग्टन में बने मंदिर में प्राणप्रतिष्ठा हो गई। स्वामीजी ने कई विदेशियों को सत्संग की ओर अभिमुख किया। लंदन की थेम्स नदी में ठाकुरजी को स्नान कराकर मानो थेम्स को गंगातुल्य पवित्र किया। लगातार दो महीने लंदन में रहकर सत्संग के प्रचार करके वे भारत वापस लौटे। अमरीका में सत्संग के प्रचार का काम जारी रखने के लिए उन्होंने चार विद्वान सन्तों को अमेरिका भी भेजा।

30. स्वागत और बिदाई

पूरे पाँच महीने अफ्रीका और ईंग्लैण्ड के हरिभक्तों को सुख-सन्तोष देकर योगीजी महाराज भारत पधारे, तो भारत के अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती आदि विविध भाषाओं के अखबारों में उनके कार्य की काफ़ी प्रशंसा की गई। जगह-जगह पर उनके यशोगान गाए गए। एशिया के तत्कालीन सबसे बड़े सभागृह-मुंबई के षण्मुखानन्द हॉल में उनका प्रकट सम्मान किया गया। उनको सम्मान-पत्र अर्पित किया गया। उस समय स्वामी चिन्मयानन्दजी ने कहा कि 'हमारे युवक जब पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण कर रहे हैं, ऐसे समय में हमारे इन सन्तपुरुष ने केवल धर्म के प्रचार के लिए ही इतनी वृद्ध उम्र में भी विलायत तक का प्रवास किया, धर्म

और नीति के संस्कार दिए – यह वास्तव में प्रशंसनीय बात है।' बड़ौदा में भी स्वामीजी का भव्य सम्मान किया गया।

गुजरात राज्य की तत्कालीन राजधानी अहमदाबाद में तो योगीजी महाराज की सम्मानयात्रा के एक मील लम्बे दृश्य दिखाई दे रहे थे। केन्द्रस्थान पर बिराजमान योगीजी महाराज के दर्शन के लिए कम से कम छः लाख लोगों की संख्या उमड़ पड़ी थी। शहर के प्रसिद्ध टैगोर हॉल में हुई सभा में गुजरात के उस समय के मुख्यमंत्री श्री हितेन्द्रभाई देसाई, अन्य मंत्रीगण एवं विविध सम्प्रदाय के सन्त-महन्तों ने एक साथ बड़े आदर से अभिवादन किया। इस अवसर पर मुख्यमंत्री श्री हितेन्द्रभाई देसाई ने कहा था, 'योगीजी महाराज का सम्मान अर्थात् भारतीय संस्कृति का, सच्चे सनातनी महामानव का सम्मान है। योगीजी महाराज का सम्मान तो समस्त मानवजाति के समुद्धारक का सम्मान है। आज भारत में और इतर देशों में चारों ओर अशान्ति का साम्राज्य फैला है, उस अशान्ति को मिटानेवाले शान्तिदाता सन्त के रूप में हम योगीजी महाराज का सम्मान कर रहे हैं।'

इसी प्रकार गुजरात के विभिन्न शहरों लीमड़ी, गढडा, भावनगर, महुवा, अमरेली, राजकोट, गोंडल आदि स्थानों पर भी उनका भक्तिपूर्ण सम्मान हुआ। इतने बड़े-बड़े सम्मान समारंभों के दौरान वे अपनी गुरुभक्ति और कर्तव्य परायणता को कभी नहीं भूले। शास्त्रीजी महाराज के संकल्प के अनुसार उन्होंने सारंगपुर में तैयार हुए नूतन सुवर्ण सिंहासन में ठाकुरजी की आरती उतारी। भावनगर में तो मुसलाधार वर्षा होते हुए भी उन्होंने मंदिर का शुभ भूमिपूजन संपन्न किया। उसी तरह महुवा में शास्त्रीजी महाराज के गुरु भगतजी महाराज के जन्मस्थान पर तैयार किए गए मंदिर में मूर्ति प्रतिष्ठा की।

समस्त भारत के राजपुरुषों, शिक्षणशास्त्रियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, सन्तों, विविध धर्मों के महन्तों, उद्योगपतियों, डॉक्टरों, वकीलों, देशसेवकों और नाना प्रकार के विभिन्न विशिष्ट व्यक्तियों ने उनके कार्यों की, उनकी धर्मनिष्ठा की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की।

आखिरी तीन महीने वे गोंडल में रहे। वहाँ शरदपूर्णिमा के उत्सव

के दिन अक्षरदेहरी के पीछे संगमरमर के सुन्दर सिंहासन पर गुरु शास्त्रीजी महाराज की भव्य प्रतिमा की विधिपूर्वक पूजा की। गोंडल में रहकर सबकी मनोकामनाएँ पूरी कीं। सभी हरिभक्तों को गोंडल बुलाकर उनसे मिले, उनको आशीर्वाद दिए। अनेक प्रकार के छोटे-बड़े उत्सव करके सबकी स्मृति में हमेशा के लिए स्थान पा लिया। फिर एक दिन वे अचानक हृदय रोगग्रस्त हो गए। उनकी अगम्य लीला को कोई भी समझ न सका। रोग बढ़ता गया। विशेष उपचार के लिए उनको मुंबई लाना जरूरी था। वे मुंबई पधारे और संवत् 2027 की पौष कृष्णा एकादशी के दिन (दि. 23-11-1971) दोपहर को करीब 1 बजे उपस्थित सन्तों और हरिभक्तों को 'जय स्वामिनारायण' कहकर वे अपनी इच्छा से अक्षरधाम सिधार गए।

उनके शरीर को विमान द्वारा गोंडल लाया गया। पौष कृष्णा द्वादशी के दिन उनके शरीर का षोडशोपचार पूजन करके अक्षर मंदिर की बाँयी ओर विशाल खेत में देह का अग्निसंस्कार किया गया। उस समय देश-विदेश के हज़ारों हरिभक्तों और बड़े-बड़े महानुभावों ने सहृदयतापूर्वक अपने आँसुओं से इन वात्सल्यमूर्ति संत को अन्तिम श्रद्धांजलि दी। (अग्नि संस्कार के उस पवित्र स्थान पर आज विशाल योगी स्मारक खड़ा है।)

31. योगीजी महाराज को क्या पसंद है?

योगीजी महाराज स्वधाम पधारे, तब तक वे मोटे-खद्दर के कपड़े ही पहनते थे। सादगी और सेवा उनकी विशेष पसन्द थीं। वे हमेशा काष्ठ के पात्र में भोजन के सभी पदार्थों को मिलाकर उसमें थोड़ा-सा पानी मिलाकर ही भोजन करते थे। जब मिठाई या अच्छे पदार्थ बने हों, तब उपवास कर लेना उनकी पसन्द का विशेष तप था। उनका चेहरा हमेशा खिला हुआ प्रसन्न ही रहता! वे हमेशा हँसते-मुस्कराते ही नज़र आते थे। छोटा-बड़ा कोई भी व्यक्ति उनके पास आता था, वे सबको प्यार से बुलाते, सभी का कुशल समाचार पूछते, सबको आशीर्वाद देते, सबके दुःख दूर करने के लिए भगवान स्वामिनारायण को हमेशा प्रार्थना करते। 'स्वामिनारायण' का धुन-गान उनके मुख से हमेशा चलता ही रहता।

योगीजी महाराज को छोटे बच्चे बहुत ही प्यारे थे। बच्चों को प्यार से

बुलाकर पास बिठाते और वे उनसे धुन गवाते –

'स्वामी और नारायण, अक्षर और पुरुषोत्तम ।
आत्मा और परमात्मा, ब्रह्म और परब्रह्म ॥'

योगीजी महाराज बच्चों को एक साथ बैठाकर उनसे भजन गवाते। उनको कीर्तन और गुणातीतानन्द स्वामी के उपदेशामृत से कुछ पंक्तियाँ सिखलाते। श्रीजीमहाराज और गुणातीतानन्द स्वामी की बातें कहते। भगतजी महाराज और शास्त्रीजी महाराज के प्रसंग सुनाते। पूजा और आरती करना समझाते और अन्त में प्रसाद देकर उन्हें खूब प्रसन्न कर देते।

योगीजी महाराज का उपदेश था कि 'प्रत्येक छात्र को प्रात:काल में ही बिस्तर छोड़ देना चाहिए। उठकर 'स्वामिनारायण' का स्मरण करना चाहिए। स्नान-ध्यान-पूजन से निवृत्त होकर ठाकुरजी को दण्डवत् प्रणाम करने चाहिए। शिक्षापत्री के कम से कम पाँच श्लोक पढ़ने चाहिए। तदन्तर अपनी पाठशाला का अध्ययन करना चाहिए।'

'प्राथमिक-माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों को कम से कम घर में प्रतिदिन चार घण्टे और महाविद्यालय कॉलेज के छात्रों को कम से कम आठ घण्टे अध्ययन करना जरूरी है। चोरी तो किसी भी हालत में कभी भी नहीं करनी चाहिए।'

'स्कूल तथा कॉलेज जाते समय हमेशा नि:संकोच तिलक करना चाहिए। मंदिर, बाल मण्डल, युवक मण्डल में सत्संग के लिए प्रतिदिन नियमित जाना जरूरी है।'

'गुणातीतानन्द स्वामी का उपदेशामृत, वचनामृत और कीर्तन आदि धर्मशास्त्रों के मुख्य सिद्धांतों को कण्ठस्थ करना चाहिए।'

'किसी की चीज़ को बिना उसके मालिक की इज़ाजत के कभी नहीं छूना चाहिए। रास्ते में पड़ी हुई कोई भी चीज़, यदि वह अपनी नहीं हैं, तो उसे नहीं उठाना चाहिए। झूठ का तो हमेशा के लिए त्याग ही कर देना चाहिए।'

'एकादशी का व्रत-उपवास नियमित रूप से करना चाहिए। दूध-पानी हमेशा छानकर ही पीना चाहिए। बीड़ी-सिगारेट कभी नहीं पीना चाहिए। नाटक-सिनेमा नहीं देखना चाहिए। हॉटेल की और बाहर की खाद्य-वस्तुएँ

कभी नहीं खानी चाहिए।'

योगीजी महाराज को ऐसे संस्कारी और चारित्र्यवान बाल-युवक बहुत पसन्द थे। वे अपने उपदेशों में और भी कई अमूल्य बातें बताते थे...

32. योगीजी महाराज का उपदेश

1. खाते-पीते, घूमते-फिरते, सोते-जागते प्रत्येक क्रिया में सतत भगवान का स्मरण करते रहें।
2. कम से कम दो वचनामृतों और 'गुणातीतानन्द स्वामी का उपदेशामृत' की दस बातों का नियमित रूप से पाठ करें।
3. कंठस्थ किए गए कीर्तन, वचनामृत और गुणातीतानन्द स्वामी का उपदेशामृत की पंक्तियों का पुनरावर्तन करते रहें।
4. हमें इकट्ठे होकर जगतभर की फालतू बातें मत करना, व्यर्थ समय गँवाने के बजाय ज्ञानगोष्ठी करें, कथावार्ता करें, भगवान और सन्तों की लीलाओं का स्मरण करें तथा महापुरुषों ने जो बातें कही हैं, उनका मनन-चिन्तन करें।
5. लगातार अपने दोषों को मिटाने की चिन्ता करें। क्रोध को तो अपने पास आने ही न दें। महापुरुषों के समक्ष निष्कपटभाव-सरलभाव से पेश आए, ताकि उनकी कृपादृष्टि बनी रहे और हम निर्दोष हो जाएँ।
6. ज्ञान प्राप्त करने से और सेवा करने से मनुष्य की प्रगति होती है। छोटी-बड़ी किसी भी प्रकार की सेवा में लग जाना चाहिए। कथा-वार्ता सुनने का व्यसन ही हो जाना चाहिए।
7. *'नानक' नाने हो रहिए, जैसी नानी दूब ।*
   घास-फूस सब उड़ गया, दूब खूब की खूब ॥

   पानी के बहाव में अकड़कर खड़ा रहनेवाला पेड़ बह जाता है, लेकिन छोटी-सी दूर्वा, जो कि पानी का बहाव आते ही ढल जाती है, उस पर से चाहे कितना भी पानी बह जाए वह नहीं बह जाती। उसी तरह अभिमानी एवं अकक्ड़ न बनें, किन्तु निर्मानी होकर, छोटी-सी छोटी सेवा में अपने आपको लगा दें। देहाभिमान न आने दें, तो हम उखड़ नहीं सकते, सत्संग में स्थिर बन पाएँगे तथा सत्संग में देशकाल का

व्यवधान नहीं टिकेगा।

8. युवकों को आपस में संगठन, सहृदयता और एकता रखना आवश्यक है।
9. सत्संगीमात्र को दिव्य-अलौकिक मानना। प्रत्येक हरिभक्त में दिव्यभाव रखना। हमें जो संत के द्वारा भगवान का प्रकट स्वरूप मिला है उसे निर्दोष समझना, भगवान और उनके भक्तों पर कभी दुर्भावना या अरुचि नहीं पैदा होने देना और किसी के अवगुण का चिन्तन तथा कथन नहीं करना।
10. किसी की दिल्लगी मत करें। न कभी ऊधम मचाएँ। हमें हमारा स्वभाव शान्त रखना चाहिए।
11. दूसरों की क्रियाओं में तथा स्वरूप में दोष न देखकर अपने दोषों की छानबीन करनी चाहिए।
12. सहन करना, वचन और शरीर का कष्ट सहने के लिए तैयार रहना। जो भक्त कष्ट सहता है, उस पर भगवान तथा सन्त दोनों प्रसन्न रहते हैं।
13. जहाँ कहीं, जैसा-तैसा, जो भी मिल जाए, उससे काम चला लेना। किसी वस्तु का आग्रह करके कभी झगड़ा पैदा नहीं करना चाहिए।
14. हमें आग जैसा होना चाहिए, पानी जैसा नहीं। आग में जो भी रंग डालो, वह आग के रंग का ही हो जाता है। पानी में रंग डालने पर तुरन्त पानी का रंग बदल जाता है, पानी दूसरे रंग से स्वयं रंग जाता है। हम अपने रंग से औरों को भले ही रंग डालें, परन्तु हम दूसरे के रंगों से रंग न जाएँ इसका खयाल रखना।
15. हम शहर में भले ही रहें, लेकिन हमारी नज़र संयम में रहनी चाहिए, शहर का कोई दोष हमें न लग जाए इसका खयाल रखना। शहर में कई प्रकार के भले-बुरे प्रलोभन होते हैं, उनसे बचना चाहिए। हमेशा मंदिर में जाकर प्रार्थना, पूजा-आरती करनी चाहिए, भगवान और सन्तों को प्रसन्न रखने के लिए उन्हें प्रधानता दें, ताकि शहरी जीवन का कोई दोष हम में प्रवेश न कर सके।
16. साधु बनें, साधुता सीखें, स्वभाव सरल बनाएँ। साधुता का मतलब है

– क्षमाशीलता–सहनशीलता। स्वभाव ऐसा मधुर होना चाहिए, जिससे लोगों पर अच्छा असर पड़े।

17. दास का भी दास होकर रहना, यही सबसे ऊँचा पद (डिग्री) है। जूठे पत्तल उठाना, बरतन माँजना, हरिभक्तों के कपड़े धोना, मंदिर के पाखाने साफ करना, चौके की सफाई करना आदि काम कर लेने चाहिए। बड़े साहब बन जाने पर भी ऐसी सेवा हमेशा करते रहना चाहिए। यह मोक्ष की साधना है, यह जरूर सीखनी–करनी चाहिए।

18. अहिंसा और ब्रह्मचर्य का पालन हमेशा हृदय से करना चाहिए, अपनी आत्मा के विषय में 'मैं गुणातीत हूँ, अक्षर हूँ, ब्रह्म हूँ' ऐसा समझना।

19. धाम, धामी और मुक्त ये तीन शाश्वत (नित्य) हैं, श्रीजीमहाराज परब्रह्म पुरुषोत्तम हैं, सर्व अवतारों के अवतारी हैं, कर्ता, साकार, सर्वोपरि और प्रकट हैं। गुणातीतानन्द स्वामी मूल अक्षरब्रह्म हैं, महाराज के रहने का धाम हैं और प्रकट सत्पुरुष मोक्ष का द्वार है, इस बात पर पूरी श्रद्धा रखनी चाहिए, दृढ़ता रखनी चाहिए।

33. पूज्य प्रमुखस्वामी महाराज

संवत् 2026 में (सन् 1950) अहमदाबाद में ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज ने अपने स्थान पर 28 वर्ष की उम्र के युवान संत स्वामी नारायणस्वरूपदासजी को अपना उपवस्त्र ओढ़ाकर 'बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम स्वामिनारायण संस्था' (बी.ए.पी.एस.) के अध्यक्ष पद पर नियुक्त किया और उनकी आज्ञा में रहने का हरिभक्तों को आदेश दिया। तभी से सब उनको 'प्रमुखस्वामी' के नाम से पहचानने लगे।

योगीजी महाराज ने इस घटना को अपने शब्दों में इस प्रकार दर्ज किया है : 'स्वामीजी ने नारायणस्वरूपदासजी के उपर कृपादृष्टि की कि मुझे इनको ही संस्था के प्रमुख पद पर नियुक्त करना है। यह विधि अहमदाबाद में हुई। उस समय मैं पास में ही बैठा था । स्वामीजी ने मुझे आदेश दिया, तुम इनके सर पर हाथ रखो, जिससे तुम जैसे गुण इनमें आएँ। मैंने उनके सर पर हाथ रखा, तब स्वामीजी बोले कि आपने हाथ रखा, तो मान लो मेरा भी हाथ आ गया। इस प्रकार प्रमुखपद दिया गया, जिससे

स्वामीजी बहुत प्रसन्न हुए।'

उसी दिन से योगीजी महाराज के आदेश के अनुसार प्रमुखस्वामी महाराज हमारी संस्था एवं सम्प्रदाय की निरन्तर सेवा करते रहे हैं। उनकी 48वीं जन्म जयन्ती मुंबई में हरिभक्तों ने बड़ी धूमधाम से मनाई, तब योगीजी महाराज ने कहा था, 'प्रमुखस्वामी की बाल्यावस्था में ही शास्त्रीजी महाराज की उन पर कृपादृष्टि पड़ गई थी। उनकी प्रमुखस्थान पर नियुक्ति की, सत्संग की कितनी श्रीवृद्धि हुई! कैसे साधुओं को दीक्षा दी! सबको प्रमुखस्वामी की आज्ञा का पालन करना चाहिए, प्रमुखस्वामी तो शास्त्रीजी महाराज का प्रकट स्वरूप हैं, उनमें और प्रमुखस्वामी में तिलमात्र का भी फ़र्क नहीं है, ऐसा दिव्यभाव रखिए, हमको सात सौ साधु बनाने हैं। यह कार्य प्रमुखस्वामी के द्वारा सम्पन्न होगा' ऐसी भविष्यवाणी प्रमुखस्वामी महाराज के विषय में योगीजी महाराज ने पहले से ही कह दी।

अंतिम बीमारी के दिनों में योगीजी महाराज ने भक्तों से कहा था, 'प्रमुखस्वामी मेरा सर्वस्व हैं। आप सबको अब इनके द्वारा सुख मिलेगा।'

आज प्रमुखस्वामी महाराज हमारे गुरुहरि, प्रकट ब्रह्मस्वरूप एवं मोक्षदाता गुरुहरि हैं उनकी प्रसन्नता के लिए हम सब उनकी आज्ञा का यथार्थ पालन करें।